Sarvto-Bhadrachakra

Astrology

अनुक्रमणिका

1

चक्ररचना

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि चक्रं त्रैलोक्यदीपकम्।
विख्यातं सर्वतोभद्रं सद्यः प्रत्ययकारकम्॥

अर्थः त्रिभुवन के दीपक समान तथा प्राणीमात्र के विषय में शुभ और अशुभ बताने बाले विख्यात सर्वतोभद्रचक्र के विषय में कहता हूं... (1)

विवरणः निरयन ज्योतिष में सर्वतोभद्रचक्र को त्रिभुवन (आकाश-पाताल-पृथ्वी) के लिए ज्ञान को तेजजोमय दीपक के रूप में माना गया है, जो चक्र प्राणीमात्र के लिए उनके जीवन में बनी, बननेवाली घटनाओं के विषय में सचोट ख्याल देने वाला एक मात्र समर्थ चक्र माना गया है, इस विषय में मैं विवेचन करूंगा।

ऊर्ध्वगा दश विन्यस्य तिर्यगेखाम्तधादश।
एकाशीतिपदं चक्रं जायते नात्र संशयः॥

अर्थ : दस रेखाएं खड़ी बनाकर उस पर दस लेटी रेखाएं बनाने पर यह चक्र बनेगा... (2)

विवरण : यहां दूसरे श्लोक में सर्वतोभद्रचक्र बनाने का तरीका बताया गया है तथा उसका प्रभाव बताया गया है। आकृति (1) में बताई गई दस लेटी रेखाएं बनाकर उस पर दस खड़ी रेखाएं बनाने पर प्रत्येक खड़ी और लेटी लाइनों में नौ-नौ खाने होंगे। इस प्रकार कुल इक्कासी (81) खानों का कोष्ठक तैयार होगा। इस चक्र में अब सोलह (16) स्वर किस क्रम में रखे जाएंगे, इसे ब्राद में आने वाले श्लोक में समझा जा सकता है।

सर्वतोभद्रक्र

अ	कृ	रो	मृ	आ	पु	पु	श्ले	आ
भ	उ	अ	व	क	ह	ड	उ	म
अ	ल	लृ	वृ	मि	क	लृ	म	पू
रे	च	म	ओ	11 सु मं 6	औ	सिं	ट	उ
उ	द	मि	9 सु 4, 14	10 श 5, 15	7 चर 12 बु	क	प	ह
पू	स	कुं	14 अः	13 गु 8, 3	12 अं	तु	र	चि
श	ग	अै	म	ध	वृ	अे	न	स्वा
ध	ॠ	ख	ज	भ	य	न	ऋ	वि
ई	श्र	अ	उ	प	मू	ज्ये	अ	इ

अकारादिस्वराः कोष्ठेष्वीशादिविदिशि क्रमात्।
सृष्टिमार्गेव दातव्याः षोडशैवं चतुर्भ्रमम्।।

अर्थः इस कोष्ठक में इशान आदि क्रम से बनने वाले प्रत्येक कोनों में अ कारादि सोलह स्वर लिखें... (3)

विवरण : हमने पिछले श्लोक में देखा कि इस सर्वतोभद्रचक्र में 81 खाने हैं, अब उस चक्र में संस्कृत बाराक्षरी के सोलह स्वारों अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ, लृ, लृ, ए, ऐ, ओ, औ, अं और अः का किस क्रम और किस खाने में रखा जाएगा यह बताया गया है।

यदि आप चक्र का ध्यानपूर्वक निरीक्षण करेंगे तो मालूम पड़ेगा कि 9 ☉ 9 खानों का एक बड़ा चौरस है। अब ईशान कोने में अर्थात् आपके हाथ बायें हाथ की ओर के ऊपरी खाने में **अ** रखें और दाहिने हाथ

की ओर के कोने में **आ** रखें। इसके बाद दाहिने हाथ के नीचे वाले कोने में ह्रस्व **इ** रखें और बाईं ओर के कोने में बड़ी **ई** रखें। अब देखें कि बड़े चौरस के कोनों में भी ऊपर के क्रमानुसार ही **उ, ऊ, ऋ, ॠ** रखें। इसके पश्चात उसके अंदर 5 ☞ 5 का चौरस दिखाई देगा। इस चौरस के कोनों में भी उसी क्रम से **ऌ, ॡ, ए,** और **ऐ** बिठाएं, अब अंतिम 3 ☞ 3 का सबसे अंदर वाला छोटा चौरस रहा। इस चौरस के चार कोनों में **ओ, औ, अं** और **अः** इसी क्रम से लगाएं।

कृत्तिकादीनी धिष्णयानि पूर्वाशादि लिखेत् क्रमात्।
सप्त सप्त क्रमादेतान्यष्टा विंशतिसंख्यया।।

अर्थः अब पूर्व दिशा के क्रम से प्रत्येक ओर सात-सात करके अट्ठाईस नक्षत्रों को चौखटे में रखें... (4)

विवरणः सर्वतोभद्रचक्र में सोलह स्वर किस जगह रखें, यह श्लोक 3 में समझाया गया है। अब कृत्तिका वगैरह अट्ठाईस नक्षत्र किस खाने में रखा जाएगा यह बताएंगे। चक्र में प्रत्येक नक्षत्र का मात्र पहला अक्षर ही रखे गए हैं, इसी कारण सभी नक्षत्रों के नाम क्रमपूर्वक याद रखें जाएं यह आवश्यक है क्योंकि अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशीर्ष, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाति, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, अभिजीत, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद और रेवती।

चक्र में रखते समय कृत्तिका नक्षत्र से शुरुआत की जाती है और अश्विनी तथा भरणी, इन दोनों नक्षत्रों को रेवती के बाद लिया गया है, इसे विशेष रूप से याद रखें।

ऊपर के 22 नक्षत्रों को चार भागों में बांट दें कि जिससे प्रत्येक में सात-सात नक्षत्र आएं। अब **अ** तथा **आ** इन दो स्वरों के बीच अ के पास के खाने से शुरू करके कृत्तिका के लिए **कृ**, रोहिणी के लिए **रो**, इस प्रकार सात नक्षत्र रखें। इसके बाद **आ** के नीचे के खाने से शुरू करके **इ** तक सात खानों में मघा से विशाखा तक के नक्षत्रों के लिए **म, पू, उ, ह, च, स्वा** और **वि** लिखें, अब **इ** से उलटे चल कर ई तक के सात नीचे वाले खानों में अनुराधा से श्रवण तक के और अंत में **ई** से ऊपर की ओर जाने वाली खड़ी लाइनों में सात खानों में ठीक

नीचे से आरंभ करके घनिष्ठा, शततारा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, रेवती, अश्विनी तथा भरणी नक्षत्र रखें।

कृत्तिका-आश्लेषा इन सात नक्षत्र पूर्व में मघा से विशाखा दक्षिण में अनुराधा से श्रवण नीचे पश्चिम में और बाकी के उत्तर दिशा में रखे जाते हैं।

अवकहडादिषु प्राच्या मटरपरताश्च दक्षिणे।
नयभजखाश्च वारुण्यां गसदचलास्तथोत्तरे॥

अर्थ : नक्षत्रों के नीचे की पंक्तियों में अंदरूनी चक्र में **अ, व, क, ह, ङ; म, ट, प, र, त; न, य, भ, ज, ख;** तथा **ग,, स, द, च, ल** अक्षर रखें... (5)

विवरण : स्वर तथा नक्षत्र रखने के बाद के अक्षर कहां और कैसे क्रम में रखें यह यहां बताया गया है।

नक्षत्र चक्र के रोहिणी नक्षत्र के नीचे के खानों में **अ**, और उसके बाद के चार खानों में **व, क, ह** और **ड** रखें। यह हुई पूर्व दिशा की बात। **उ** और **ऊ** इन दो स्वरों के बीच पाँच अक्षर रखे जा चुके हैं। अब **ऊ** और **ऋ** के बीच दाहिनी ओर खड़ी लाइन में भी पाँच खाने हैं उसमें ऊपर से नीचे **म, ट, प, र** और **त** लिखें। इसके बाद **ऋ** और **ॠ** के बीच की लेटी लाइन के पाँच खानों में दाहिनी तरफ से शुरू करके बांईं ओर तक **न, य, भ, ज** और **ख** लिखें। अब **ऋ** और **उ** के बीच बाएं हाथ की ओर की खड़ी लाइन में नीचे के खानों से शुरू करके ऊपर के खाने तक **म, स, द, च** और **ल** लिखें।

इस प्रकार ककावारी के अक्षर अपने चक्र में योग्य क्रम पूर्वक रखे जा सकते हैं।

त्रयस्त्रयो वृषाद्यश्व पूर्वाशादि क्रमाब्दुधैः।
राशयो द्वादशैवंतु मेषान्ताः सृष्टि मार्गतः॥

अर्थ : पूर्व दिशा से आरंभ करके वृषभ से लेकर मेष तक की तीन-तीन राशियों को पंक्तियों में रखें... (6)

विवरण : अक्षर पूर्ण हुए अब राशियों की बारी आई। मेष, वृषभ, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुंभ और मीन। इस प्रकार ये बारह राशियां हैं। अब भीतरी खाली चक्र में पूर्व दिशा में **लृ** और **लॄ** के बीच तीन खाने खाली हैं, उनमें वृषभ, मिथुन और कर्क

राशि के लिए अनुक्रमेष **वृ, मि** तथा **क** अक्षर लिखें। इसके पश्चात दाहिने हाथ की खड़ी लाइन में **लृ** और **ए** के बीच के तीन खानों में ऊपर से नीचे तक **सिं, क, तु** अक्षर लिखकर सिंह, कन्या तथा तुला राशि दर्शाएं। इसके बाद **ए** और **ऐ** के बीच के नीचे के तीन खानों में वृश्चिक, धनु तथा मकर बताने के लिए दाहिनी तरफ **वृ, ध** तथा **म** लिखें। इसी प्रकार **ऐ** और **लृ** के बीच बाएं हाथ की ओर खड़ी लाइन में नीचे से आरंभ कर के ऊपर की ओर कुंभ, मीन और मेष राशि को रखने के लिए **कुं, मी** तथा **मे** लिखें।

शेलेषु कोष्टके ष्वेवं नन्दादितिथिपंचकम्।
वराणां सप्तकं लेख्यं भौमाद्य चक्रमेण वै।।

अर्थ : बाकी के कोठों में नंदा आदि तिथियों की पांच जाड़ियों तथा मंगल से आरंभ करके सातों बार क्रम से लिखें... (7)

विवरण : अब हमारे चक्र में जो पाँच खाने खाली रह गए हैं उनमें से सबसे ऊपरी खाने में नंदा तिथि अर्थात् प्रदीपदा, षष्ठी और एकादशी आए तथा उसके साथ मंगलवार और रविवार आए। इसके लिए उस खाने में 1, 6, 11, **सू, मं** लिखें। अब दाहिने हाथ की ओर के खाने में भद्रा तिथि अर्थात **बीर** सातम (7) और बारस (12) तथा सोमवार **च** और बुधवार **बु** लिखें। इसके बाद के निचले खाने में जया तिथि 3, 2, 13 तथा गुरुवार का **गु** लिखें, बाएं हाथ की तरफ के खाली खाने में रिक्ता तिथि 4, 9, 14 और शुक्रवार का **शु** लिखें और बीच के खाने में पूर्ण तिथि 5, 10, 15 तथा शनिवार का **श** लिखें। अब बाद वाले श्लोक में किस वार का निश्चित खाने में इसकी स्पष्टता की गई है।

भौभादित्यौ च नन्दायां भद्रामां बुधशीतम्।
जतायो च गुरुःप्रोस्तो रिक्तयां भार्गव स्तथा।।
पूणायां शनिवारश्च लेख्यो चक्रेत्र निश्चितम्।
इत्येष सर्वतोभद्र विस्तारः कीर्तितो मया।।

अर्थ : नन्दा तिथि के खाने में रवि तथा मंगल, भद्रा के खाने में चंद्र तथा बुध, जया के खाने में गुरु, रिक्ता के खाने में शुक्र और पूर्णा के खाने में शनिवार, के ही रूप में निश्चितता से इस चक्र में सभी जगहों पर लिखें। इस प्रकार से सर्वतोभद्र चक्र का विस्तार बताया गया है... (2, 9)

विवरण : तिथियां तथा वार किस क्रम में और कौन से खाने में रखे जाएं यह हमने उपरोक्त अर्थ में देख लिया है। उपरोक्त दो श्लोकों में ग्रंथकार ने वही बात स्पष्टता करते हुए कही है कि नन्दा तिथि के खाने में रवि तथा मंगलवार लिखें, भद्रा तिथि के खाने में सोमवार तथा बुधवार लिखें, जया तिथि के खाने में गुरुवार, रिक्ता के खाने में शुक्रवार और पूर्णा तिथि के खाने में शनिवार लिखें।

हमें यह याद रखना चाहिए कि नन्दा, भद्रा, जया, रिक्ता और पूर्णा यह तिथियों के विशेष नाम हैं। किसी भी पक्ष की एकम, छठ और ग्यारस को नन्दा तिथि कहा जाता है, किसी भी पक्ष की तीज, आठम और तेरस को जया तिथि कहा जाता है, किसी भी पक्ष की दूज, सातम और बारस को भद्रा तिथि कहा जाता है, किसी भी पक्ष की चौथ, नौम, चौदस रिक्ता तिथि कहलाती हैं तथा किसी भी पक्ष की पांचम और दशम शुक्ल पक्ष की पूर्णिमा तथा कृष्ण पक्ष की अमावस यह चारों तिथियां पूर्णा तिथि कहलाती हैं। इन सभी स्थितियों को चक्र में देखें जाएंगे तो तमाम वस्तुएं स्पष्ट होती जाएंगी।

●●●

2

ग्रह दृष्टि तथा वेध

ऊर्ध्वदृष्टि च भौमौकी केकरौ बुधभार्गवौ।।
समदृष्टि च .जीवेन्दू शनिराहु अधोदृशो।।

अर्थ : मंगल और सूर्य की उर्ध्वदृष्टि है, बुध और शुक्र की तिर्थक दृष्टि है। गुरु तथा चंद्र की समदृष्टि है और शनि तथा राहु की अधोदृष्टि है... (10)।

विवरण : किस ग्रह की दृष्टि किस प्रकार की है, यहां यह बताया गया है। सर्वतोभद्रचक्र के ऊपर से फल कथन करने के लिए इन दृष्टियों का बहुत महत्त्व है। इसी कारण पाठकों को इन दृष्टियों को याद रखना बहुत अनिवार्य है। विशेष ध्यान दें कि सूर्य और मंगल उर्ध्व दृष्टि वाले अर्थात ऊंची दृष्टि से देखने वाले ग्रह हैं। बुध तथा शुक्र तिर्यक अर्थात टेढ़ी नजर से (तिरछी नजर से) देखने वाले हैं। चंद्र और गुरु समान दृष्टि से अर्थात सीधी नजर से देखते हैं, जबकि शनि और राहु सदा अधोदृष्टि अर्थात् नीची नजर से देखने वाले ग्रह हैं।

नीचस्थोध्वदृष्टिश्व उच्चैरधो निरीसयेत्।
समश्व पार्श्वतो दृष्टिस्त्रिधा दृष्टिः प्रकथ्यते।।

अर्थ : नीचस्थान में रहनेवाला उर्ध्वदृष्टि से देखे तथा उच्च में रहने वाला अधोदृष्टि से देखें और सम हो तो पार्श्वदृष्टि से देखे, इस तरह तीन प्रकार की दृष्टि कहलाई जाती है... (11)

विवरण : ग्रहों की उच्च नीच आदि भिन्न-भिन्न स्थिति होती हैं। अब ऐसी किसी भी स्थिति में रहने वाला ग्रह किसी दृष्टि से देखें, इसका यहां वर्णन किया गया है। जो ग्रह अपनी नीच राशि में होगा वह ग्रह

उर्ध्वदृष्टि से देखेगा। उच्च राशि में रहने वाला ग्रह अधोदृष्टि से देखेगा और सम रहने वाला ग्रह पार्श्वदृष्टि अर्थात तिरछी नजर से देखेगा।

शन्यके राहु केत्वारा: क्रश: शेषा: शुभाग्रहा:।
क्ररमुक्तो बुध: क्रूर: क्षीण चन्द्र स्तथैव च।।

अर्थ : शनि, सूर्य, राहु, केतु और मंगल क्रूर ग्रह हैं। बाकि के ग्रह शुभ ग्रह हैं। क्रूर युक्त बुध तथा क्षीण चंद्र क्रूर है... (12)

विवरण : अब यहां पर बताया गया है कि कौन से ग्रह क्रूर ग्रह अथवा पाप ग्रह और कौन से ग्रह सौम्य अथवा शुभ ग्रह माने जाएंगे। ग्रंथकार कहते हैं कि सूर्य, मंगल, राहु, केतु और शनि—ये पाँच ग्रह सदा क्रूर अथवा खराब ग्रह हैं। इन्हें पाप ग्रह भी कहा जाता है। शुक्र और गुरु सदा के लिए शुभ अथवा सौम्य ग्रह माने जाते हैं। यूं तो चंद्र भी शुभ ग्रह है, किन्तु कृष्ण पक्ष का चंद्र क्षीण माना जाता है और उस समय उसे क्रूर ग्रह माना जाता है। इसी तरह बुध भी शुभ ग्रह है किन्तु जब वह क्रूर ग्रह के साथ हो तो तब उसे भी अशुभ अथवा क्रूर ग्रह माना जाता है।

यस्मिनृक्षे स्थित: खेटस्तत्तो वेधत्रयं भवेत्।
ग्रहदृष्टि वशेनात्र वामसम्मुखदक्षिणे।।

अर्थ : ग्रह, नक्षत्र पर हो, वहां से उस ग्रह की दृष्टि के अनुसार वाम, दक्षिण और सन्मुख इस प्रकार तीन वेध होते हैं... (13)

विवरण : ग्रह किसी भी नक्षत्र पर बैठा हो, वहां से वह ग्रह तीन प्रकार के वेध खड़े कर सकता है। दाहिनी ओर, बाईं ओर और सामने, इन तीन प्रकारों के वेध हो सकते हैं। जिस ग्रह की दृष्टि हो, उस प्रकार का वेध, उस ग्रह से उत्पन्न होता है।

भुक्तं भोग्यं तथा क्रान्तं क्रूरगहेण च।
शुभ शुभेषु कार्येषु वर्जनीयं प्रयत्नत:।।

अर्थ : क्रूर ग्रह से युक्त, भोज्य, युक्त या बेधे गए नक्षत्र प्रत्येक शुभ तथा अशुभ कार्यों में प्रयत्नपूर्वक वर्ज्य करें... (14)

विवरण : किसी भी अच्छे या बुरे, शुभ या अशुभ कार्य का आरंभ करते समय किस नक्षत्र का त्याग करना चाहिए, इसके बारे में ग्रंथकार ने इस श्लोक में समझाया है।

ग्रंथकार कहते हैं कि जो नक्षत्र क्रूर ग्रह से वेधे गए हों उनका शुभ

तथा अशुभ कामों में त्याग करें। क्रूर ग्रह, जो नक्षत्र भोग चुका हो उसे भी न लें। क्रूर ग्रह जिस नक्षत्र में बैठा हो और जिस नक्षत्र में आने वाला हो, उन नक्षत्रों में भी शुभाशुभ कार्य नहीं करें क्योंकि इस प्रकार के क्रूर ग्रह के साथ वाला नक्षत्र अशुभ माने जाते हैं और उनका फल भी खराब होता है। यहां कही गई बात भी पाठकों को विशेष रूप से ध्यान में रखनी पड़ेगी, क्योंकि फल देखने के लिए यह बात बहुत ही महत्त्वपूर्ण है।

वक्रगे दक्षिणा दृष्टि वम्दिृष्टिश्व शीघ्रगे।।
मध्यचारे तथा मध्या ज्ञेयाभौमादि पंचके।।

अर्थ : मंगल आदि पाँच ग्रहों के लिए इतना याद रखना चाहिए कि यदि ग्रह वक्री हो तो दक्षिण दृष्टि, शीघ्र गति का हो तो वाम दृष्टि और मध्य गति का हो तो मध्य दृष्टि करता है... (15)

विवरण : वक्री अथवा उलटी गतिवाले ग्रह सदा दक्षिण दृष्टि अर्थात अपनी दाहिनी ओर दृष्टि करते हैं, शीघ्र गति के अर्थात सामान्य से अधिक गतिवाला अतिचारी ग्रह अपनी बाईं ओर अर्थात वाम दृष्टि करता है, और अपनी मध्यम गति जितनी ही गति से चलनेवाला ग्रह सन्मुखदृष्टि माना जाता है। यहां सूर्य और चंद्र एक ही जैसी गति रखते हैं तथा राहु-केतु सदा वक्री हैं, मंगल से शनि तक के पाँच ग्रहों का ही यहां उल्लेख किया गया है।

●●●

3

ग्रहगति ज्ञान

सूर्याभुक्ता उदीयन्ते सूर्यग्रस्तास्तामिनः।
र्गहात् द्वितीयगे सूर्ये स्फुर द्विबा कुजादथः॥

अर्थ : सूर्य से दूर जाने वाला ग्रह उदित होता है, सूर्य से युति में रहने वाला ग्रह अस्त होता है। मंगल आदि पाँच में से कोई भी ग्रह सूर्य के साथ युति में हो तो उसका अस्त होता है, और वह ग्रह ज़ब युति से छूटकर सूर्य से दूर जाता है तब उदित होता है। इसी प्रकार वे ग्रह सूर्य से दूसरे स्थान के विषय में आएं तो शीघ्री अर्थात वेगवान बनते हैं। इसे इस प्रकार दर्शाकर सूर्य से स्थानांतर पर ग्रहों की स्थिति और गति को स्पष्ट किया है।

समातृतीयगे ज्ञेगा मन्दा भानौ चतुर्थगे।
वक्रास्यात्पंच षष्ठेडर्केत्वति वक्राष्टसप्तमे॥

अर्थ : सूर्य से तीसरे समगति, चौथे स्थान पर आने पर मंदगति, पाँचवें, छठे वक्रगति और सातवें, आठवें आने पर अति वक्र गति प्राप्त करते हैं... (16)

विवरण : ग्रंथकार ने यहां भौमादि अर्थात मंगल, बुध, गुरु, शुक्र तथा शनि, इन पाँच ग्रहों को गति कब सम, मंद, वक्र या अतिवक्र मानी जाती है यह दर्शाते हुए बताया है कि जब उपरोक्त भौमादि ग्रह सूर्य से तीसरे स्थान में हों तब वे समगति प्राप्त करते हैं। जब चौथे, हों तब मंदगति धारण करते हैं। जब वे पाँचवें, छठे हों तब वक्रगति पाते हैं और जब वे सातवें तथा आठवें आते हैं तब अतिवक्रगति पाते हैं।

नवमे दशमे भानौ जायते कुटिला गतिः।
द्वादशैका दशेसूर्य भजते शीघ्रतां पूनः॥
अदृश्यतां पुनर्लोके वजन्त्यर्कगता ग्रहाः॥

अर्थः ग्रह सूर्य से नौवें दसवें आएं तब सामान्य गति प्राप्त करते हैं।

बारहवें और ग्यारहवें होने पर तीव्र गति के होते हैं। और तत्पश्चात सूर्य के साथ युति में आने पर अस्त होते हैं... (19)

विवरण : आगे चलकर ग्रंथकार ग्रहों की गति के लिए कहते हैं कि पहले कहे गए भौमादि पाँचों ग्रह सूर्य से जब नौवें अथवा दसवें स्थान में हों तब सामान्य गति धारण करते हैं किन्तु जब वे बारहवें या ग्यारहवें स्थान में आते हैं तब शीघ्रगति वाले बनते हैं और फिर सूर्य के साथ आकर वे अस्त हो जाते हैं।

राहुकेतु सदा वक्रो शीघ्रगै चन्द्रभास्करौ।
गतेरेक स्वभावत्वादेषं दष्टित्रेय सदा।।

अर्थ : राहु और केतु सदा वक्री हैं और सूर्य चंद्र सदा शीघ्र गति करने वाले। इन ग्रहों की हमेशा एक ही जाति की गति होने के कारण इनकी वाम, दक्षिण और सम, ये तीन प्रकार की दृष्टि होती हैं... (19)

विवरण : पहले के 16 से 18, इन तीन श्लोकों में ग्रहों की (मंगल आदि पाँच ग्रहों की) भिन्न-भिन्न गतियों के बारे में हमने जाना। अब ग्रंथकार यहां राहु, केतु, सूर्य तथा चन्द्र के विषय में बताते हैं कि राहु और केतु इन दोनों ग्रहों की गति हमेशा एक ही तरह की अर्थात वक्री ही होती है, वे टेढ़े चलते हैं–इसी तरह सूर्य तथा चंद्र की गति भी एक ही तरह की होती है और वे सदा शीघ्र गति के होते हैं, इस कारण सीधे ही चलते हैं। ये ग्रह सदा ही एक ही तरह के शीघ्र अथवा वक्रगति के होते हैं। इस कारण इन ग्रहों को तीन प्रकार की दृष्टि मिलती है। इस कारण ये ग्रह वाम, दक्षिण तथा सम तीन दृष्टि करते हैं।

क्रूरावक्रा महाक्रूरा सौम्यावक्रा महाशुभाः।
स्यूः सहज स्वभावस्था सौम्याः क्रूराश्च शीघ्रगा।।

अर्थ : वक्री क्रूर ग्रह महाक्रूर होता है। जबकि वक्री सौम्यग्रह महाशुभ बनते हैं। जब कोई भी ग्रह शीघ्र गति में हो तब वे अपने सामान्य स्वभाव के अनुसार शुभ-क्रूर माने जाते हैं... (20)

विवरण : उपरोक्त उन्नीसवें श्लोक तक ग्रहों की गतियों और दृष्टि के बारे में विवेचन करने के बाद अंत में ग्रंथकार यहां बीसवें श्लोक में बताते हैं कि जब क्रूरग्रह वक्रगति के होते हैं तब वे अधिक क्रूर बनते हैं और जब शुभ ग्रह वक्री गति में हो तब वे अधिक शुभ फल देनेवाले बनते हैं। परन्तु कोई भी ग्रह जब शीघ्र गति वाले हों तो वे अपने सहज स्वभाव के अनुसार ही शुभ और अशुभ रहते हैं।

4

वेध की स्पष्टता

अवर्णादि स्वरौ द्वौ द्वावेकवेधे द्वयोर्वेधः।
स्व्युंक्तात्मनोवेधः सानुस्वार विसर्गयोः॥

अर्थ : अ, आ, इ, ई आदि अ वर्गादि स्वर जोड़ी के एक का वेध होता है तब दोनों का वेध जानें। इसी तरह अनुस्वार और विसर्ग का भी समझें... (21)

विवरण : यहां ग्रंथकार वेध पर प्रकाश डालते हुए कहते हैं कि अ वर्गादि स्वर जोड़ियों में से यदि एक का भी स्वर का वेध हुआ हो तो उससे उस पूरी जोड़ी का अर्थात दोनों स्वर का वेध हुआ मानें। जैसे अ आ की जोड़ी में अ का वेध हो रहा हो तो आ का भी वेध हुआ माना जाएगा। इस प्रकार अ वर्गादि स्वरों के बावजूद अनुस्वार और विसर्ग की जोड़ी में से यदि एक का वेध हो तो दूसरे का भी वेध हुआ माना जाता है।

बवौशस्त्रौ पखौ चैव ज्ञेयौ ङ मौ परस्परम्।
एकेन द्वितीयं ज्ञेयं शुभा शुभ खगव्यधे॥

अर्थ : ब, व; श, स; प, ख; उसी तरह ङ, म, आ, इ एक दूसरे के जोड़ीदार हैं, ग्रहों के शुभाशुभ वेध के समय एक के कारण दूसरे का वेध जानें... (22)

विवरण : 21वें श्लोक में स्वर की जोड़ियों को बताने के बाद, उसी तरह के व्यंजनों की कौन-कौन सी कड़ी यहां बताई गई हैं। यहां ब और व; श और स; प और ख, तथा ङ और म एक ही तरह के होने के

कारण जोड़ियां हैं, यह बात कहकर ग्रंथकार कहते हैं कि इन जोड़ियों में यदि एक का वेध हो रहा हो तो दूसरे का वेध हुआ है, ऐसे समझें।

घङधाः वणठाः श्चैव धफढास्थझजास्तथा।
एतत्रिकं त्रिकं विद्धं विद्धैः कपदमैःक्रमात्॥

अर्थ : क, प, द, म, इनमें से किसी भी एक का वेध होने पर क्रमानुसार घ, ङ, छ आदि तीन वर्ण वेधित होते हैं। अर्थात क कार को वेधने से घ, ङ, छ और प, कार को बेधने से ष, ण, ठ, जबकि द कार के बेध से ध, फ, ढ तथा म कार के वेध के कारण थ, झ, ञ का भी वेध माना जाता है... (23)

विवरण : ग्रंथकार ने इस तरह दर्शाया है कि क, प, द, म आदि वर्णों का वेध होने पर क्रमानुसार दूसरे तीन-तीन वर्णों का भी वेध होता है। इस बात को स्पष्ट करते हुए लेखक बताते हैं कि क वर्ण का वेध होने पर घ, ङ और छ, इन वर्णों का भी वेध होता है। प वर्ण का वेध होने पर ष, ण और ठ इन वर्णों का भी वेध होता है। इसी तरह द वर्ण का वेध होने पर ध, फ और ढ वर्णों का वेध होता है और म वर्ण का वेध होता है तो उसके साथ ही ज, थ, झ और ञ का भी वेध माना जाता है। जिज्ञासुओं को इसे विशेष याद रखना चाहिए। क्योंकि आगे चलने पर फल जानने के समय, यह बात विशेष उपयोगी बनेगी।

घ ङ छा रौद्रगे वेधे वणठा हस्तगे ग्रहे॥
ध फ ढाः पूर्वषाढा थां थझञा भाद्र उत्तरे॥

अर्थ : आर्द्रा में रहने वाले ग्रह घ, ङ, छ को हस्त में रहने वाला ग्रह व, ण, ठ को पूर्वाषाढ़ा में रहने वाला ध, फ, ढ को तथा उत्तराभाद्रपद में रहने वाला ग्रह थ, झ और ञ को वेधते हैं... (24)

विवरण : कोई भी ग्रह किस संजोग में कौन-कौन से वर्णों का वेध कर सकते हैं, यह दर्शाया गया है, इसके लिए ग्रंथकार यहां स्पष्टता करते हैं कि जब कोई भी ग्रह आर्द्रा नक्षत्र के ऊपर भ्रमण करते हों, तब वह ग्रह थ, ङ तथा छ, इन तीन वर्णों का वेध करता है। जब किसी ग्रह का भ्रमण हस्त नक्षत्र में हो तब वह ग्रह व, ण और ठ वर्णों का वेध होता है। पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र पर भ्रमण करने वाले ग्रह अपने भ्रमण के दौरान ध, फ तथा ढ वर्णों का वेध करते हैं और उत्तराभाद्रपद नक्षत्र में रहने वाला ग्रह सदा ही, थ, झ तथा ञ अक्षरों का वेध करता है।

अवर्णादि स्वर द्वंन्द्वेण्वेकवेधे द्वयोर्व्यधः॥
युक्त स्वरात्मके वेधे त्वनुस्वार विसर्गयोः॥

अर्थ : अ करादि स्वरों की जोड़ियों में एक के वेध से दोनों का वेध जानें। युक्त स्वरों में अनुस्वार विसर्ग में भी इसी तरह समझें... (25)

विवरण : अ, आ, इ, ई आदि स्वरों की जोड़ी में जिस प्रकार एक स्वर का वेध होने पर दोनों का वेध हुआ माना जाएगा, उसी तरह युक्त स्वर (संयुक्त स्वर) का वेध हो, तब भी इसके दोनों स्वरों का वेध माना जाएगा। इसी तरह अनुस्वार अथवा विसर्ग जिस स्वर के साथ जुड़े हों, उस स्वर का वेध होने पर भी उनका वेध समझा जाएगा।

●●●

5

वेध और फल

कोणस्थ धिष्णययोर्मध्ये अंत्यादि पादगे ग्रहे।
अस्वरादि चतुष्थस्य वेधः पूर्णातिथेः क्रमात्॥

अर्थ : चंद्र के कोने में रहने वाले नक्षत्रों के आदि या अंत्य चरण में रहने वाले ग्रह के कारण अ स्वरादि चारों का तथा पूर्णतिथि का वेध होता है... (26)

विवरण : प्रारंभ के श्लोक में हमने देखा कि चक्र के बाहर चक्र के अन्तर्गत और तीन चक्र होते हैं तथा उसके ठीक अंदर के मध्य भाग में एक अधिक केन्द्रस्थ चक्र होता है, जिस कारण अंतरगत चक्र में पूर्णा (5, 10, 15) तिथि होती है।

यहां ग्रंथकार यह कहना चाहते हैं कि सबसे ऊपरी चक्र के कोने में जो नक्षत्र है, वे उन नक्षत्रों के अंतिम या प्रथम चरण में कोई ग्रह (अर्थात संधि में हो) तब चक्र के अंदर के सभी चक्र उस कोने में आनेवाले चारों स्वरों, पूर्णातिथि का, वह ग्रह वेध करता है।

उदाहरणार्थ भरणी के अंतिम अथवा कृत्तिका के पहले चरण की संधि में कोई ग्रह है, तो उस कोने से भीतर की ओर के कोने से उतरने पर अ, उ, लृ ओ आदि चार स्वर आएंगे और बिलकुल भीतर पहुंचने पर पूर्णातिथि (5, 10, 15) आएगी। अब ऊपरी कोने में संधि में रहने वाला वह ग्रह इन सभी का वेध करता है।

एकादि क्रूरवेधेन फलं पुंसां प्रज्ञायते।
उद्वेगश्च भये हानिः रोगो मृत्यु क्रमेवच॥

अर्थ : एक या उससे अधिक क्रूर वेध होने पर मनुष्य को उद्वेग, भय, नुकसान, रोग या मृत्यु क्रमपूर्वक होते हैं... (27)

विवरण : क्रूर ग्रह का वेध हो, तब इसका क्या परिणाम आ सकता है, इसे स्पष्ट करते हुए लेखक यहां बताते हैं कि स्वर, वर्ण, नक्षत्र, राशि, तिथि आदि पाँच में से किसी भी एक का क्रूर ग्रह से वेध हुआ हो तो व्यक्ति को उद्वेग और चिंता करवाता है। यदि किन्हीं दो बातों का क्रूर ग्रह से वेध हुआ हो तो भय उत्पन्न करता है। तीन बातों पर क्रूर ग्रह से वेध हो रहा हो तो महाभय उत्पन्न करवाता है, तीन बातों पर क्रूर ग्रह का वेध पड़ने पर बहुत ही बड़ा नुकसान होता है, जबकि क्रूर ग्रह के वेध में चार बातें आ जाएं तो भयंकर रोग का भोग हुआ जा सकता है और पाँच बातों पर क्रूर ग्रह का वेध हो तो उस समय मनुष्य की तुरंत ही मृत्यु समझी जाए। क्रूर ग्रह पाँच हैं, यह हमने आगे देखा। (सूर्य, मंगल, शनि, राहु और केतु) फिर भी इसे फिर से दोहराते हैं।

ऋक्षे भ्रमो क्षरे हानिः स्वरेव्याधिर्भयं तिथौ।
राशौ विद्धे महाविछांपंच विद्धो न जीवति॥

अर्थ : यदि क्रूर ग्रह से नक्षत्र का वेध हो तो भ्रम, अक्षर का वेध हो तो नुकसान, स्वर का वेध होने पर रोग, तिथि का वेध होने पर भय और शशि का वेध होने पर महाविघ्न होता है तथा पाँचों का वेध हो तो जातक जीवित नहीं रहता... (28)

विवरण : यहां वेध के फल को अधिक स्पष्ट करने पर चक्र के ग्रंथकार नक्षत्र, अक्षर, स्वर, तिथि तथा राशि के वेध से जातक को मिलनेवाले फल को दर्शाते हुए कहते हैं कि यदि किसी भी जातक के जन्म का नक्षत्र क्रूर ग्रह से वेध पा रहा हो तो उसकी विचार शक्ति जड़ बनती है, इस कारण उसे भ्रम उत्पन्न होता है, यदि नाम के पहले अक्षर पर वेध हो तो, उसे भारी नुकसान होता है। यदि पहले अक्षर के स्वर में वेध आ रहा हो तो रोग की उत्पत्ति होती है, जातक के जन्म की राशि में वेध हो तो कोई बड़ी विपत्ति अथवा विघ्न आ सकता है। यदि नक्षत्र, अक्षर, स्वर तिथि राशि, ये पाँचों एक साथ वेध प्राप्त करते हैं तो यह जातक की निश्चित मृत्यु का सूचक है।

एक वेधे भयं युद्धं युग्मवेधे धनक्षयः।
त्रिवेघेन भवेभ्द्रगो मृत्युर्वेध चतुष्टये॥

अर्थ : यदि कोई एक ग्रह वेध करे तो युद्ध का भय, दो से धन का नाश, तीन से भंग और चार ग्रह वेध करें तो मृत्यु हो जाती है... (29)

विवरण : जब एक से अधिक क्रूर ग्रह वेध करें तो परिणाम क्या आएगा, इसका खुलासा करते हुए लेखक कहते हैं कि यदि एक क्रूर ग्रह वेध कर हो तो युद्ध में या लड़ाई-झगड़े में जातक के मस्तक पर भय माना जाएगा। यदि दो नक्षत्र वेध कर रहें हों तो युद्ध के कारण अधिक खर्च होने पर जातक का बहुत बड़ा नुकसान होता है। यदि तीन ग्रह वेध कर रहे हों तो इसके कारण युद्ध के समय जातक के पख में भगदड़ मचने पर उसका बल टूट जाता है और यदि चार क्रूर ग्रह एकसाथ वेध करें तो जातक की मृत्यु होती है।

यथा दुष्टफलाः क्रूरास्तथा सौम्यफलाः शुभाः।
क्रूरायुक्ता पुनः सौम्या ज्ञेया क्रूर फलप्रदा।।

अर्थ : जिस प्रकार पापग्रह अशुभ फल देते हैं उसी तरह सौम्य ग्रहों का वेध होने पर वे शुभ फल देते हैं, परंतु जब सौम्य ग्रह क्रूर ग्रह से युक्त हों तब वे सौम्य ग्रह भी क्रूर फल देने वाले बनते हैं।

विवरणं : पहले के श्लोकों में हमने देखा कि क्रूर ग्रहों के वेध से क्या फल उत्पन्न होते हैं। क्रूर ग्रह जब वेध करते हैं तब जिस प्रकार से वे अशुभ फल जातक के लिए उत्पन्न करते हैं उसी तरह जब शुभ ग्रहों का वेध होता है तब वे ग्रह जातक को सदा शुभ फल देने वाले बनते हैं। किन्तु लेखक यहां यह बात स्पष्ट कर रहे हैं कि यदि कोई शुभ ग्रह पाप ग्रह के साथ बैठा हो और वो वेध करे तो वो भी पाप ग्रह की ही तरह क्रूर अथवा अशुभ फल उत्पन्न करता है और उसके शुभफल का नाश होता है।

अर्कवेधेमनस्तापो द्रव्यहानिश्व भूसुते।
रोगथीड़ाकरः सौरिः राहु केतु च विघ्नदौ।।

अर्थ : सूर्य के वेध से मन उचाट होता है, मंगल से धन का नाश, शनि से रोग पीड़ा तथा राहु केतु से विघ्न उत्पन्न होता है... (31)

विवरण : ग्रहों का वेध होने पर कौन-सा ग्रह किस प्रकार का फल देता है इस बात का खुलासा करते हुए इस श्लोक में बताया गया है कि यदि सूर्य वेधकर्ता ग्रह हो तो इससे जातक का मन उचाट, चिंता अथवा

घुटन का अनुभव करता है। यदि इसी तरह मंगल वेध करे तो इससे जातक को धन संबंधी नुकसान होता है। यदि इस प्रकार शनि वेध करने वाला ग्रह हो तो रोगों के कारण जातक को अनेक प्रकार की पीड़ाएं उत्पन्न होंगी और यदि वेध करने वाले ग्रह के रूप में राहु अथवा केतु हों तो इस कारण जातक के जीवन में और कार्यों में अनेक प्रकार के विघ्न उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार पाँचों क्रूर ग्रहों के वेध का फल यहां स्पष्ट किया गया है। अब इसके बाद के श्लोक में शुभ ग्रहों से होने वाले वेध के कारण प्राप्त होने वाले फलों के बारे में बताया गया है।

चन्द्रे मिश्रफलं पुंसां रतिलाभश्व मार्गवे।
बुध वेधे भवेत्प्रज्ञा जीवः सर्वफलप्रदः॥

अर्थ : चंद्र के वेध से व्यक्ति को मिश्र फल मिलता है, शुक्र के वेध के कारण काम सुख मिलता है, बुध के वेध से प्रज्ञा-ज्ञान बढ़ता है और गुरु के वेध करने पर व्यक्ति को सब तरह के शुभ फल मिलते हैं... (32)

विवरण : शुभ ग्रहों के वेध का फल दर्शाते हुए लेखक कहते हैं कि यदि वेधकर्ता ग्रह चंद्र हो तो मिश्र फल देता है। चंद्र मिश्र फल देता है, इसका महत्त्वपूर्ण कारण है। शास्त्रकारों ने चंद्र को शुभ ग्रह माना है। फिर भी जब कृष्ण पक्ष का चंद्र हो, तब वह दिन प्रतिदिन क्षीण होता जाता है। छोटा होता जाता है और इसी कारण उस समय वह चंद्र का अशुभ फल देने वाला अथवा क्रूर ग्रह माना जाता है। और इसी कारण से चंद्र को मिश्र फल देनेवाला कहा गया है। जब चंद्र वेध कर रहा हो, तब उसके द्वारा दिए जाने वाले फल का निर्णय करने से पहले यह बात विशेष रूप से याद रखें।

इसी प्रकार यदि शुक्र वेध करने वाला ग्रह हो तो वह जातक को कामसुख, देह सुख, प्रणय प्रसंग, स्त्री सुख आदि शृंगार रस से संबंधित सुख देने वाला बनता है, जबकि बुध से वेध हो रहा हो तब उस समय प्रज्ञा उत्पन्न होती है। अर्थात व्यक्ति में समझदारी पैदा होती है और ज्ञान बढ़ता है, अच्छे गुण (सद्गुण) खिल उठते हैं, अच्छे विचार आते हैं और उम्दा भाव उत्पन्न होते हैं। बुध भी क्रूर ग्रह के साथ हो तो अशुभ फल देने वाला बनता है। उस समय वह कुबुद्धि और खराब विचारों को

फलानेवाला बनता है और यदि गुरु से वेध हो तो उस समय जातक को प्रत्येक मामले में प्रत्येक प्रकार का सुख देने वाला तथा शुभ फल देने वाला बनता है।

सौम्यपापग्रहा हन्यान्नभ्नो व्याधिधनक्षयः।
वेधे वैनाशिकर्क्षस्य द्विवेधे चायुषो भयम्।।

अर्थ : यदि सौम्य तथा पाप ग्रह नाम नक्षत्र का वेध करें तो व्याधि तथा धननाश होता है और साथ ही विनाशक नक्षत्र का क्रूर वेध हो तो इन तीन वेधों से आयु के लिए भय समझें... (33)

विवरण : यदि जातक के नाम नक्षत्र पर क्रूर ग्रह का वेध हो रहा हो तो वह अशुभ फल देगा, यह हम जानते हैं। परन्तु यदि इस क्रूर ग्रह के साथ उसी नक्षत्र पर शुभ ग्रह का वेध हो तो वह क्रूरयुक्त होने के कारण अशुभ फल ही देगा। इस प्रकार शुभ और क्रूर ग्रह के वेध से रोग अथवा बीमारी की उत्पत्ति होती है और जातक के धन का नाश भी होता है। जिस समय जन्म नक्षत्र पर यह दो वेध हों और उसी समय विनाशक नक्षत्र पर भी कोई क्रूर ग्रह का वेध पड़ रहा हो तो, इस प्रकार तीन तरह के वेध इकट्ठे होने पर मृत्यु लाने वाली बीमारी लाने वाले योग माने जाते हैं। इस प्रकार तीन वेधों का फल बिलकुल खराब उत्पन्न होते हैं, यह ग्रंथकार का कहना है।

इस प्रकार भिन्न-भिन्न वेधों से उत्पन्न होने वाले वेधों के फल का लेखक ने यहां वर्णन किया है।

●●●

6

ग्रह बल

स्वनक्षेत्रस्थे बलंपूर्णं पाढ़ोनं मित्र भे ग्रहे।
अर्धं समगृहे ज्ञेयं पादं शत्रुगृहे स्थिते॥

अर्थ : अपने घर में पूर्ण, मित्र के घर में तीसरे भाग का और समक्षेत्र में आधा होने पर शत्रु के घर में चौथे भाग का, ये ग्रहों के बल माने गए हैं... (34)

विवरण : यदि कोई ग्रह अपने ही घर में अर्थात अपनी ही राशि में हो तो वह ग्रह पूरी तरह बलवाल माना जाएगा। यदि ग्रह अपने मित्र ग्रह की राशि में हो तो ग्रह को पौने भाग का बल मिलता है, यह माना जाता है। यदि ग्रह अपने समक्षेत्र ग्रह की राशि में हो तो उस ग्रह को आधा बल मिलता है और यदि ग्रह अपने शत्रु के घर में बैठा हो तो ग्रह का बल चौथे भाग का माना जाता है।

इदं च सौम्य क्रूराणां बलं स्थानावशात्मकम्।
एतदेव बलं बोध्यं सौम्ये क्रूरे विपर्ययात्॥

अर्थ : इन शुभ तथा क्रूर ग्रहों का बल उनके स्थानानुसार कहा गया है। सौम्य अथवा क्रूर ग्रहों का यह बल एक दूसरे से अलग माना जाए... (35)

विवरण : सौम्य तथा क्रूर ग्रहों के बल के बारे में स्पष्टता करते हुए लेखक यहां समझाते हुए कहते हैं कि किसी भी ग्रह का बल, उसके स्थान से निश्चित किया जाता है। यह स्थान चार हैं–1. अपना घर, 2. मित्र का घर, 3. अपने ही समान ग्रह का घर, 4. शत्रु का घर। यह बल सौम्य और क्रूर ग्रहों के लिए एक दूसरे से विरुद्ध अर्थ में मानें। जैसे कि कोई सौम्य ग्रह अपने ही हक की राशि में बैठा हो तब वह पूर्ण

बल प्राप्त करता है। इससे विपरीत क्रूर ग्रह अपनी मालिकी की राशि में बैठा हो तो उसे मात्र पाव भाग का फल मिलता है।

यदि शुभ ग्रह अपने मित्र की मालिकी वाली राशि में बैठा हो तो उसे पौने भाग का बल मिलता है, जबकि पाप ग्रह अपने मित्र की राशि में बैठे तो उसे आधा ही बल प्राप्त होता है। अपने समान ग्रह की मालिकी की राशि में शुभ ग्रह आधा ही बल पाता है और पाप ग्रह यदि समान ग्रह की राशि में बैठा हो तो उसे पौने भाग का बल मिलता है। शुभ ग्रह अपने दुश्मन की राशि में बैठने पर मात्र पाव भाग का बल पाता है किन्तु यदि कोई पाप ग्रह अपने शत्रु की राशि में बैठा हो तो इससे उसे संपूर्ण बल मिलता है। इसी कारण वह ग्रह अपना अशुभ फल पूरा का पूरा प्राप्त करता है।

स्थानवेध समयोगे यत्संख्यं जायते बलम्।
तस्ससख्यं वेध वस्तूनां फलं ज्ञेयं विचक्षणैः॥

अर्थ : जब किसी भी वस्तु के स्थान का वेध हो तब जितनी बल की संख्या हो, इस प्रमाण में उस वस्तु के बारे में फल का विचार करना चाहिए... (36)

विवरण : स्थान वेध के बारे में स्पष्टता करते हुए यहां लेखक समझाते हैं कि जब किसी भी स्थान पर वेध होता है तब उस वेध के फल का विचार करते समय वेध करने वाले ग्रह के बल का विचार करके, उसी के अनुसार वेध के फल की गहनता अथवा गंभीरता माननी चाहिए और वह स्थान जिन-जिन वस्तुओं का निर्देश करे, उन वस्तुओं पर इस वेध का कितना और क्या असर होगा यह निश्चित करें तब ही फल निर्देशन की सत्यता प्राप्त हो सकेगी। यदि पूर्णबल वाला ग्रह वेध करे तो वह ग्रह शुभ या अशुभ हो, इस प्रमाण में वह ग्रह अपना शुभ या अशुभ फल पूरी तरह से दे सकता है।

ग्रहाः क्रूरास्तथा सौम्याः वक्रमार्गोच्चनीचगाः।
स्थानं च वेध्यमित्येवं बलं ज्ञात्वा फलं वदेत्॥

अर्थ : वक्री, मार्गी, उच्चगत या नीचगत ग्रह, शुभ अथवा अशुभ ग्रह; और वेध होने वाले स्थान, इन सभी का विचार करके ही फल कथन करें... (37)

विवरण : पिछले श्लोक में हम ग्रहों के विभिन्न बलों के विशय में

जान चुके हैं। क्रूर और शुभ, वक्री, मार्गी, उच्च या नीच होने पर उनके बल उसी प्रमाण में अधिक और कम होते हैं। इसी तरह वे जिस स्थान पर वेध करते हैं उस स्थान के विषय में भी विचार करना चाहिए। इस प्रकार के तमाम प्रकार के बलाबल का विचार करने के बाद ही ज्योतिषी का वेध के फल का पूर्णरूप से वर्णन करना चाहिए।

वक्र ग्रहे फलं द्विघ्नं त्रिगुणं स्वोच्च संस्थिते।
स्वभावजं फलं शीघ्र नीचस्थो निष्फलोग्रह॥

अर्थ : वक्र ग्रह का दोहरा, उच्च का तीन गुना शीघ्र ग्रह का अपने भाव के अनुसार और नीच ग्रह का फल कुछ नहीं है, यह समझें... (38)

विवरण : पिछले श्लोक में जिन बातों का उल्लेख हुआ है उन्हीं को अधिक स्पष्ट करने के लिए यहां इस श्लोक में लेखक समझाते हैं कि यदि कोई ग्रह वक्रगति का हो तो उसके वेध का फल दोगुना माना जाएगा। उच्च स्थान के विषय में रहने वाला ग्रह तीन गुना बल पाता है और इसी कारण उसके वेध का फल भी तीन गुना माना जाएगा। यदि कोई ग्रह शीघ्र गति का हो तो वह स्वयं अपने ही घर में हो, ऐसा बल पाता है जबकि अपने नीच स्थान में रहने वाला ग्रह निष्फल माना जाएगा। इसी कारण यदि वह ग्रह वेध कर रहा हो तब भी वेध से किसी प्रकार का फल नहीं मिलता।

तिथिराश्यंशनक्षत्रं विद्धं क्रूरग्रहेण यत्।
सर्वेषु शुभकार्येषु वर्ज येत्तत्प्रयत्नतः॥

अर्थ : जो तिथि, राशि, अंश या नक्षत्र क्रूर ग्रह से वेधित हों उनका सभी शुभ कार्यों में त्याग करना चाहिए... (39)

विवरण : इस श्लोक द्वारा लेखक यह बताते हैं कि जो तिथि, नक्षत्र, राशि अथवा नवमांश क्रूर ग्रह से वेध जाते हैं, वे सभी अशुभ माने जाते हैं। अर्थात दोषकारक माने जाते हैं। इस कारण कोई भी शुभ कार्य अर्थात विवाह आदि कार्य करने हों अथवा व्यापार-धंधे का आरंभ करना हो या सफर करना हो तो, इन कार्यों के लिए इस तरह की वेधित तिथि या नक्षत्र अथवा वेधपाई राशि या वेध पाए नवमांश उपयोग में न लिए जाएं। यदि इन्हें उपयोग में लिया जाता है तो निश्चित ही कोई हानि होगी या काम में विघ्न उत्पन्न होगा।

अर्थात अशुभ मुहूर्त में किए गए कार्य की तरह ही अशुभ परिणाम मिलते हैं।

न नन्दति विवाहे च यात्रायां न निवर्तते।
न रोगान्मुच्यते रोगी वेधवेला कृतोद्यम:॥

अर्थ : वेध के समय में किया गया विवाह, आनंद नहीं देता। यात्रा में गए लोग वापस नहीं आते या रोगी रोग से मुक्त नहीं होते... (40)

विवरण : पिछले श्लोक में बताई गई बातों को अधिक स्पष्ट करते हुए लेखक बताते हैं कि अगर वेध के समय में अर्थात क्रूर ग्रह से बिंधी हुई तिथि, नक्षत्र, राशि या नवांश में विवाह किया जाए तो वह विवाह आनंददायी नहीं होती अर्थात सफल नहीं होता। इसी तरह यदि इस वेधवाले समय में सफर किया जाए तो ऐसे सफर से मुसाफिर लौट नहीं पाता अथवा उसकी मृत्यु हो जाती है। और तो और नक्षत्र, राशि, नवमांश या तिथि के वेध के समय में यदि किसी को रोग हो जाए तो उस जातक को रोग से मुक्ति नहीं मिलती। अर्थात वह रोग जातक के लिए घातक सिद्ध हो सकता है।

रोगकाले भवेद्वधः क्रूरखेचर सम्भवः।
वक्रंगत्या भवेन्मृत्युः शीघ्रे याप्यारूजान्विताः॥

अर्थ : रोग के समय क्रूर ग्रह का वेध हो रहा हो तो और यदि वह ग्रह वक्री हो तो रोगी की मृत्यु होती है और यदि शीघ्र ग्रह का वेध हो तो लंबी बीमारी भोगनी पड़ती है... (41)

विवरण : विशेष कर व्यक्ति को जिस समय कोई बड़ी बीमारी हुई हो, उस समय से रोगी का भविष्य जानने के लिए यहां लेखक कहते हैं कि जिस समय रोग आरंभ हुआ हो उस समय की तिथि, नक्षत्र, राशि या नवमांश क्रूर ग्रह से वेध पाते हों और यदि वे वेध करने वाले ग्रह वक्री हुए हों तो इसके फलस्वरूप उस रोगी की मृत्यु होती है और यदि वेध करने वाला वह क्रूर ग्रह शीघ्र गति का हो तो रोगी मृत्यु नहीं पाता किन्तु उसकी बीमारी अधिक समय तक चलती है।

वेधस्थान रणे भङ्गो दुर्गे खण्डिः प्रजायते।
कवि प्रवेशनं तत्र योधधातव तब वै॥

अर्थ : वेध स्थान पर युद्ध हो तो लश्कर (सेना) में भगदड़ या फूटफाट

हो जाती है और दुर्ग भग्न हो जाते हैं। यदि उस वेध स्थान में शुक्र आ रहा हो तो सेना का भी नाश होता है... (42)

विवरण : इस श्लोक से लेखक समझाते हैं कि जिस समय युद्ध हो रहा हो तो उस समय दो में से जिस एक पक्ष के किले के स्थान पर क्रूर ग्रह का वेध हो रहा हो उस पक्ष की सेना में वेध के परिणामस्वरूप भगदड़ मच जाती है अथवा सेना में फूटफाट पड़ जाती है। उस पक्ष के किले में भी मनमुटाव हो जाता है और वह पक्ष अपनी रक्षा भी खो बैठता है। इसके अलावा यदि इस वेध में शुक्र भी आए तो इसके परिणामस्वरूप उस पक्ष की पूरी सेना का भी विनाश होता है। इस प्रकार क्रूर ग्रहों के वेध के बुरे परिणामों से बचने के लिए यह बातें विशेष रूप से ध्यान में रखी जाएं।

इस प्रकार रोगी के लिए, मुसाफिर के लिए साथ ही युद्ध में लड़ने वाले राजाओं, राज्यों और देशों के लिए कब किस प्रकार के वेधों से कैसे फल उत्पन्न होते हैं, यह बात इस प्रकरण में स्पष्ट की गई है। प्रत्येक व्यक्ति को अपने जीवन की सुख-शांति के लिए इसका ज्ञान होना जरूरी है। इस ज्ञान का उपयोग करके तथा योग्य शुभ अवसर ढूंढ़कर यदि व्यक्ति अपने कार्यों का आयोजन करें तो इससे उसके जीवन के महत्त्वपूर्ण कार्य सरल, सफल और सुख देने वाला बनेगा, इसमें कोई शंका नहीं है।

●●●

7

अस्त उदय

यत्र पूर्वादिकाष्ठयां वृषराश्यादिगो रविः।
सा दिगस्तिभिता ज्ञेयास्तिस्त्रः शेषाः सदोदिताः॥

अर्थ : वृषभादि राशि में सूर्य रहता है इस कारण पूर्वादि दिशा अस्त मानी जाती हैं। जो अस्त की दिशा है उसे छोड़ कर बाकी की तीन सहोदित दिशा कहलाती हैं... (43)

विवरण : कौन सी दिशा अस्त दिशा कहलाती है तथा कौन सी दिशा उदित मानी जाती है, यह स्पष्ट करते हुए लेखक कहते हैं कि वृषभ, मिथुन और कर्क राशि पूर्व दिशा की राशियां हैं। सिंह, कन्या और तुला राशि दक्षिण दिशा की राशियां हैं। वृश्चिक, धन और मकर यह तीनों राशियां पश्चिम दिशा की राशियां हैं और कुंभ, मीन और मेष यह तीनों राशि उत्तर दिशा में रहने वाली मानी जाती हैं।

अब पंचांग के आधार पर सूर्य की राशि देखने पर सूर्य किस दिशा में है, यह मालूम चलता है। जिस दिशा में हो, उस दिशा में अस्त दिशा कहा जाता है और बाकी की तीन दिशाओं को सदा ही उदित दिशा माना जाता है।

जिस प्रकार सूर्य वृषभ राशि में हो तो वह पूर्व दिशा में माना जाएगा। यह दिशा अस्त दिशा मानी जाती है और दक्षिण तथा इसके बाद की पश्चिम और उत्तर दिशाएं सदा ही उदित दिशाओं के रूप में जानी जाती हैं। यही सभी दिशाओं के लिए लागू होता है।

ईशानस्थाः स्वराःप्राच्यां ज्ञेया आग्नेयगा यमे।
नेऋत्य स्थाप्रतीच्यां वै वायव्या सौम्यगास्तथा॥

अर्थ : ईशान कोने के स्वरों को पूर्व में, अग्नि कोने के स्वरों को दक्षिण में, नैऋत्य के पश्चिम में और वायव्य कोने के स्वरों को उत्तर में जानें... (44)

विवरण : सर्वतोभद्रचक्र में सोलह स्वरों को चार विभागों में विभाजित किया गया है। प्रत्येक कोने में चार-चार स्वरों को रखा गया है। अ, उ, लृ, ओ ये चार स्वर ईशान कोने में हैं, और इसी तरह दूसरे चार-चार स्वर अग्नि, नैऋत्य, वायव्य कोनों में हैं। अब इन स्वरों की दिशा किस प्रकार गिनें, यह समझाते हुए यहां लेखक कहते हैं कि इशान कोने के स्वरों के लिए पूर्व दिशा जानें। अग्नि कोने के स्वर आ, ऊ, लृ और और स्वरों की दिशा दक्षिण मानें। इ, ऋ, ए और अ इन्हें नैऋत्य कोने के स्वर पश्चिम दिशा के स्वर मानें जाते हैं तथा ई, ऋ, ऐ और अः यह चार स्वर उत्तर दिशा के स्वर हैं, यह समझें।

नक्षत्राणि स्क्य वर्णा राश्यस्तिथयो दिशः।
ते सर्वेऽस्तंगताज्ञेया यत्र भानुस्त्रिमासिकः।।

अर्थ : सूर्य जिस दिशा में तीन महीने रहता है उस दिशा में नक्षत्र, स्वर, वर्ण, राशियां और दिशा अस्त हुई मानी जाएंगी... (45)

विवरण : हम चक्र में देखें तो पता चलता है कि चक्र के पूर्व भाग में वृषभ, मिथुन और कर्क यह तीन राशियां दी गई हैं। इस कारण सब सूर्य इन तीन राशियों में भ्रमण करता है तब वह तीन मास तक पूर्व दिशा में ही रहता है। सूर्य के पूर्व दिशा में रहने से तीन महीने तक वह दिशा अस्त दिशा मानी जाती है। अब जो जो नक्षत्र, स्वर, अक्षर, राशि तथा तिथि चक्र की पूर्व दिशा के विभाग में हों, वे सब उस दिशा के अस्त होने के कारण अस्त हुए माने जाएंगे।

नक्षत्रेस्ते रुजो वर्षे हानिः शोकः स्वरेस्तगे।।
राशौ विघ्नं तिथौ भीतिः पंचास्ते मरणंध्रुवम्।।

अर्थ : नक्षत्र का अस्त हो तो रोग, वर्ण का अस्त हो तो नुकसान (हानि), स्वर के अस्त से शोक, राशि से विघ्न और तिथि के अस्त से भय होता है। पाँचों अस्त हों तो मृत्यु होती है... (46)

विवरण : जैसा कि हम देख चुके हैं कि सूर्य जिस दिशा में लगातार तीन राशियों से गुजरता है, वह दिशा तीन मास तक अस्त रहने वाली है और जब दिशा अस्त होगी तब उस पूरे समय में, उस दिशा में रहने

वाले नक्षत्र, वर्ण, स्वर, राशि तथा तिथि भी अस्त माने जाते हैं। अब यहां इस अस्त का फल समझाते हुए लेखक बताते हैं कि यदि नक्षत्र अस्त हो तो वह जातक को रोग देने वाला बनता है। यदि वर्ण का अस्त हो रहा हो तो जातक को हानि होने की संभावना रहती है। स्वर के अस्त से शोक का कारण खड़ा होता है। तिथि के अस्त से जातक में भय उत्पन्न होता है। आगे चलने पर लेखक स्पष्ट करते हैं कि यदि किसी जातक के लिए नक्षत्र, वर्ण, स्वर, राशि तथा तिथि इन पाँचों का अस्त हो तो उसकी निश्चित ही मृत्यु होती है।

यात्र युद्धं विधाहश्व द्वारं प्रासादहर्म्ययोः।
न कर्तव्यं शुभं चान्दस्ताशाभिमुख नरैः॥

अर्थः अस्त की दिशा में आनेवाले नक्षत्र, वर्ण, स्वर, राशि अथवा तिथि में व्यक्ति को यात्रा, युद्ध, विवाद, घर का दरवाजा, रखना आदि शुभ काम नहीं करना चाहिए।.......... 44

विवरण : यहां लेखक स्पष्टता से बताते हैं कि अस्त दिशा में रहने वाले नक्षत्र, वर्ष, स्वर तथा तिथि और राशि निश्चित रूप से अशुभ मानी जाती हैं। इस कारण ऐसे समय पर कोई भी शुभ कार्य करना हितावह नहीं है। आगे चलने पर शुभ कार्यों के विषय में स्पष्टता करते हुए लेखक बताते हैं कि यात्रा करना, युद्ध करना, विवाह करना, नए मकान में दरवाजा लगाना आदि कार्य शुभ कार्यों में माने जाते हैं।

अस्ताशायं स्थितं यस्य यदा नामाद्यमक्षरम्।
तदा तु सर्वकार्योषु ज्ञेयो दैवहतो नरः॥

अर्थ : जब किसी भी व्यक्ति के नाम का पहला अक्षर अस्त की दिशा में आए तब उस व्यक्ति को भाग्य का मारा समझें... (48)

विवरण : व्यक्तियों को कई बार अपने तमाम छोटे-बड़े रोजिंदे कार्यों में असफलता मिलती रहती है और ऐसे में कमनसीबी का अनुभव होता है। जब भी इस प्रकार की घटना बनती है तब इसका ज्योतिष की दृष्टि से एक विशेष कारण होता है। यह कई लोगों की समझ में नहीं आता तथा व्यक्ति और ज्योतिषी भी इस बारे में कभी-कभी उलझ कर रह जाते हैं। परन्तु जो व्यक्ति या ज्योतिषी सर्वतोभद्रचक्र के विषय में जानता है उसे इस बारे में मालूम हो जाता है। अपनी इस बात पर प्रकाश डालते हुए लेखक बताते हैं कि व्यक्ति के नाम का पहला अक्षर अस्त की

दिशा में हो तब उतने समय में व्यक्ति जो कुछ भी काम करेगा उसमें वह असफलता का अनुभव करेगा और इसी कारण वह कमनसीबी का भी अनुभव करता है।

इस पर से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि अपने नाम का अक्षर किस दिशा में है, यह जानकर वह दिशा किस समय में अस्त रहता है, इसे पंचांग के सूर्य और इस सर्वतोभद्रचक्र से जान लें। ऐसा करने पर हर वर्ष का कौन-सा समय व्यक्ति के लिए कमजोर होगा यह उसे स्वयं ही पता चल जाएगा और वह जो कोई कार्य करना चाहते हैं वह दूसरे समय में (बाकी के समय में) किया जा सकता है। ऐसा करने पर असफलता पाने का भय कम रहता है।

कवो कोटे तथा द्वंद्वे चातुरंगे यहाहवे।
उद्योगोस्तंगतैयौधैः वर्जनीयो जयार्भिमिः॥

अर्थ : जय पाने की इच्छा करने वालों को योद्धाओं को जब वे अस्तंगत हों तब किले की रचना, द्वंद्व, सेना, बड़े युद्ध आदि का त्याग करना चाहिए... (49)

विवरण : हमने देखा कि जिस व्यक्ति के नाम का पहला अक्षर अस्त दिशा में आता हो तो वह व्यक्ति उतने समय के लिए खुद भी अस्त अथवा कमनसीबी माना जाएगा। जब व्यक्ति इस प्रकार अस्तसंगत हो तब वह स्वयं ही योद्धा हो तब भी उसे क्या नहीं करना चाहिए, यह बात लेखक ने स्पष्ट की है।

लेखक बताते हैं कि कोई योद्धा इस प्रकार अस्तसंगत हो तब उसे किले नहीं बनवाने चाहिए। ऐसा करने पर उसे उस काम में असफलता मिलेगी। इसी प्रकार उसे द्वंद्व युद्ध अथवा मल्ल युद्ध में नहीं उतरना चाहिए। उसके लिए चतुरंगी सेना की रचना करना और बड़े युद्ध में उतरना भी योग्य नहीं है। यदि अस्त समय में व्यक्ति ऐसे किसी भी कार्यों में प्रयत्नशील बने तो उस समय में उसे इन कार्यों में असफलता ही मिलती है और बहुत अधिक नुकसान भी भोगना पड़ता है।

नक्षत्राभ्युदिते पुष्टिः वर्वे लाभः स्मरे सुखम्।
राशौ जयस्तिथौ तेजः पदाप्तिः पंचकोदये॥

अर्थ : नक्षत्र के उदय से पुष्टि, वर्ण के उदय से लाभ, स्वर से सुख,

राशि से विजय, तिथि से तेज तथा पाँचों के उदय से व्यक्ति को **पद** प्राप्त होता है... (50)

विवरण : नक्षत्रादि पाँचों के अस्त होने से क्या बुरे फल मिलते हैं यह हम पहले ही देख चुके हैं। अब इस श्लोक में लेखक उदय के फल बताते हुए हमें नक्षत्र, वर्ण, स्वर, राशि तथा तिथि के उदय होने पर कौन-से शुभ फल प्राप्त होंगे, यह यहां बता रहे हैं।

लेखक बताते हैं कि किसी व्यक्ति के अस्त पाप नक्षत्र का उदय हो तो इससे उसे पुष्टि मिलती है अर्थात उसके कार्यों में साथ और सहकार बढ़ता है। यदि उसके वर्ण का उदय हो तो व्यक्ति के सुख में बढ़ोतरी होती है। जब उसकी राशि उदित होती है तो उस व्यक्ति को छोटे-बड़े सभी कार्यों में विजय प्राप्त होती है और जब उसकी तिथि उदित पाती है तब उसके व्यक्तित्त्व में पराक्रम बल, समार्थ्य तथा प्रभाव में बढ़ोतरी होती है और इसके कारण उन्हें सफलता मिलती है और यदि किसी व्यक्ति में इन पाँचों का उदय हो तो उसे बड़ा ओहदा अथवा सत्ता प्राप्त होती है।

इस प्रकार नक्षत्र, वर्ण, स्वर, राशि तथा तिथि, इन पाँचों में से एक-एक अथवा एक ही साथ सभी का उदय या अस्त होने पर जातक को किस तरह के शुभ या अशुभ फल मिलेंगे, इसका लेखक ने इस प्रकरण में बहुत ही स्पष्टता और सरलता से प्रस्तुतिकरण किया है। इस बारे में विचारपूर्वक और बारीकी से अभ्यास करने से मनुष्य अपने जीवन में सफलता के सोपान आसानी से चढ़ सकता है और अपनी महेच्छाएं पूरी कर सकता है।

●●●

8

प्रश्नलग्न वेध

प्रश्नकाले भवेद्विद्धं यल्लग्नं क्रूरखेचरैः।
तदुष्टं शोभन सौम्यैमिश्रैमिंश्रफलं महम्।।

अर्थ : प्रश्न समय का लग्न यदि क्रूर ग्रहों से बिंधा हो तो वह अशुभ माना जाएगा किन्तु यदि दोनों (शुभाशुभ) से बिंधा हो तो मिश्रितफल देता है... (51)

विवरण : जब कोई व्यक्ति प्रश्न करे तब प्रश्नलग्न की राशि क्रूर अपना अशुभ राशि के वेध में हो तो लग्न अशुभ अथवा बुरा फल देने वाला माना जाता है। इसी प्रकार यदि वह लग्न शुभ फल देने वाला बने तो वह शुभ ग्रहों अथवा सौम्य ग्रहों से वेधित होता है। किन्तु यदि यह लग्न शुभ और अशुभ दोनों ग्रहों से वेध में हो तो उस लग्न का फल मिश्र प्रकार का होता है अर्थात शुभ तथा अशुभ दोनों फल मिलते हैं।

हभिन्नं तु यल्लग्नं फलं लग्न स्वभावतः।
ज्ञातव्यं देश केंद्रेण भाषितं यच्चराद्धिकम्।।

अर्थ : चरादि प्रश्न लग्न जिस ग्रहों से युक्त हो उसका फल इस प्रकार प्रश्नकाल के आधार पर लग्न के स्वभावानुसार विचार करके कहें... (52)

विवरण : किसी भी प्रश्न का विचार करने पर ज्योतिषी को उस लग्न के फल को किस रूप में विचारा जाए इस बारे में लेखक ने यहां बताते हुए कहा है कि लग्न चर, स्थिर या द्विस्वभाव राशि का हो तो उसके स्वभाव के अनुसार उस लग्न का फल विचारें। लग्न में पड़े ग्रहों के फल का विचार भी करना पड़ता है और तदुपरांत उस लग्न का वेध हो तो इस बात का भी ध्यान रखा जाना चाहिए। इस प्रकार सभी बातों

का विचार करके उसका योग्य और सावधानी से समन्वय करना होगा तथा इस प्रकार निश्चित करके उस लग्न के शुभाशुभ फल को निर्णयपूर्वक कहें। यदि इस प्रकार प्रश्न का परिणाम जानने का प्रयत्न किया जाए तो तब ही इस प्रश्न का सचोट परिणाम जाना जा सकता है।

क्रूरैरुभयतो विद्धा यस्याक्षरतिथिस्वराः।
राशिर्धिण्णयं च पंचापि तस्य मृत्युर्न संशयः॥

अर्थ : यदि किसी भी जातक के वर्ण, स्वर, राशि तथा नक्षत्र, यह पाँचों एक साथ या दोनों ओर से क्रूर ग्रह के वेध में आ रहे हों तो उस जातक की मृत्यु अवश्य होती है... (53)

विवरण : जब कोई भी व्यक्ति प्रश्न करे तब यदि उसके नाम का अक्षर, स्वर, तिथि, उसकी राशि और नक्षत्र, इन सभी का एक साथ या दोनों तरफ से (अर्थात बायीं और दाहिनी ओर से) क्रूर ग्रह से वेध हो तो उस प्रश्न का लेखक ने बहुत ही खराब फल माना है। लेखक कहते हैं कि इन पाँचों बाबतों का एक ही साथ वेध हो तो उस समय यदि कोई प्रश्नकर्ता प्रश्न करे तो प्रश्न देखने वाले ज्योतिषी को समझना चाहिए कि प्रश्नकर्ता की मृत्यु होगी ही, इसमें कोई संशय नहीं रहेगा।

मण्डलं नगरं ग्रामो दुर्गं देवालयं पुरम्।
क्रूरैरुभयतो विद्धं विनश्यति न संशयः॥

अर्थ : मंडल, नगर, गांव, किला, मंदिर या शहर यदि दोनों ओर से क्रूर ग्रह से वेध पा रहे हों तो ये एकदम ही नष्ट हो जाते हैं... (54)

विवरण : किसी भी जमीन की छोटी इकाई को गांव माना है, इससे बड़ा शहर, इससे बड़ा नगर और इससे भी बड़ा नगर मंडल या राज्य माना गया है। इनके चारों ओर रक्षा की दृष्टि से दीवार बनाई होती है, इन किलों, देवस्थान अर्थात तीर्थ क्षेत्र अथवा देवमंदिर आदि का विनाश कब होगा, यह बताने के लिए लेखक यहां बताते हैं कि जब उपरोक्त स्थानों के दोनों ओर से अर्थात बाईं ओर तथा दाहिनी ओर से क्रूर ग्रह के कारण वेध हो तब उन-उन जगहों का या स्थान का विनाश होता है।

इन उपरोक्त स्थानों का वेध कैसे होगा यह जानने के लिए 'कूर्मचत्र' को जानना आवश्यक है। इसी कारण आगे आने वाले प्रकरण में हम इसे समझेंगे।

●●●

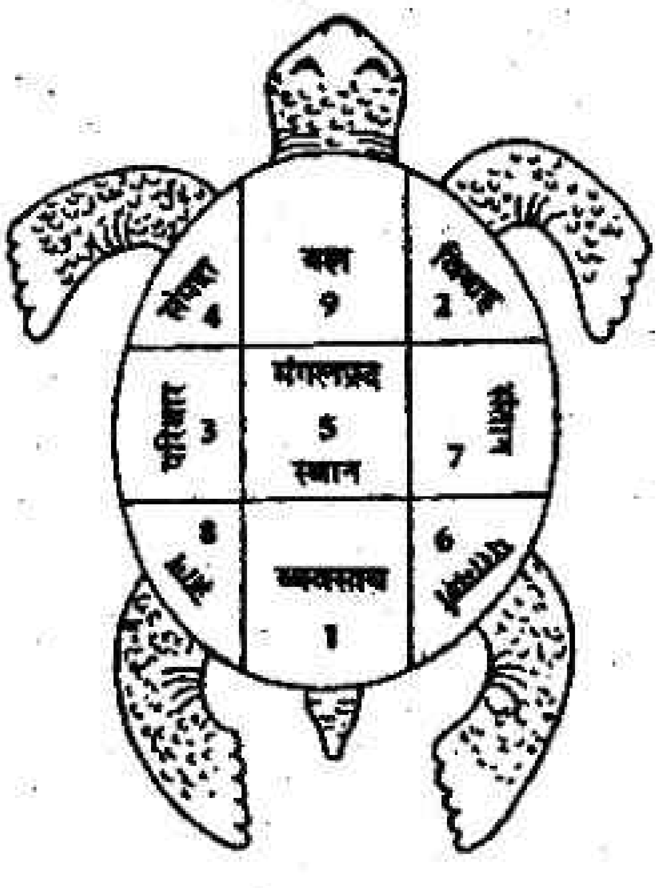
9

कूर्म वेध

कृत्तिकादि त्रिकाछेमे क्रूरविंधे च कूर्मतेः।
देशानामिस्थ देशाद्या विनश्यति यथाक्रमम्॥

अर्थ : कृत्तिकादि तीन-तीन नक्षत्रों का क्रूर ग्रह से वेध हो तो कूर्म चक्र में बताए अनुसार कूर्म के नाभि आदि अंगों के वेध से उन अंगों में सूचित देश नष्ट होते हैं... (55)

विवरण: हमने इससे पहले देखा कि किसी भी देश या स्थान का नाश कब होता है। अब इन स्थानों के नाश का विचार करने से पहले उन स्थानों का वेध कैसे होता है, यह जानने की विशेष जरूरत है। इसके लिए विशेषकर शास्त्रकारों ने कूर्मचक्र की रचना की है।



एक कछुए की आकृति में उस कछुए के अलग-अलग अंगों में उन स्थानों का प्रतिनिधित्व करने वाले तीन-तीन नक्षत्रों की कल्पना भी की गई है।

हम जानते हैं कि ज्योतिष में 27 नक्षत्रों की गणना होती है। इन सत्ताईस नक्षत्रों के तीन-तीन नक्षत्रों का एक ऐसे नौ विभाग किए गए हैं और कछुए के जो अलग-अलग अंगों में इन नक्षत्रों की नौ जोड़ियों की कल्पना की गई है। कूर्मचक्र के पिछे नक्षत्रों की गणना खासकर कृत्तिका नक्षत्र से की जाती है। कृत्तिका, रोहिणी और मृगशीर्ष इन तीन नक्षत्रों का पहला विभाग गिना जाएगा। इसी तरह नौ विभाग होंगे।

अब पृथ्वी के अलग-अलग नौ भाग कर कछुए के नौ अंगों में उसकी कल्पना करके जमाया गया है। कछुए के अंगों में ये नौ विभाग उसकी नाभि से गिने जाते हैं। नाभि, मुख, अगला दायां पैर, कमर का बायां हिस्सा तथा अगला बायां पैर ये कछुए के नौ अंग हैं और ऊपर बताए अनुसार कृत्तिका से गिनकर प्रत्येक भाग तीन-तीन नक्षत्र जमाये जाते हैं। अब कछुए के इन नौ अंगों के कल्पित तीन-तीन नक्षत्रों की जोड़ियों का जब क्रूर ग्रह से वेध होता है, ऐसा समझना चाहिए। यहां सर्वतोभद्रचक्र का विस्तार बढ़ने से ग्रंथकार कूर्मचक्र सहित उसके नक्षत्र वेधों के संबंध स्पष्ट करने का प्रयास करता है। कृत्तिकादि नक्षत्रों के वर्ण, स्वर आदि का भी वेध होता हो तो उससे तत्काल उस देश का विनाश ही समझिए।

कृत्तिकायां तथा पुष्ये रेवत्यां पुनर्वसौ।
विध्दे सति क्रमाद्धथो वर्णेषु ब्राह्मणादिपु॥

अर्थ : कृत्तिका, पुष्य, रेवती और पुनर्वसु नक्षत्रों का वेध होने से उसके क्रमानुसार ब्राह्मणादि वर्णों का भी वेध होता है... (56)

विवरण : वर्णेषु शब्द द्वारा ग्रंथकार यहां ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र उन चार वर्णों का संकेत करता है। यदि कृत्तिका, पुष्य, रेवती और पुनर्वसु ये नक्षत्र क्रूर ग्रहों से वेधे जाते हों तो कृत्तिका के वेध से ब्राह्मण जाति का वेध समझिए। पुष्य नक्षत्र के वेध से क्षत्रिय जाति का वेध समझिए। रेवती नक्षत्र के वेध से वैश्य जाति तथा पुनर्वसु नक्षत्र के वेध से शूद्र जाति का वेध हुआ समझिएं।

तैलं भाण्डं रक्षो धान्यं गजाश्वादि चतुष्पदम्।
सवं महुर्थतां याति यन क्रूरोकवस्थित:॥

अर्थ : तेल, रत्न, मिठाइयां, हाथी, घोड़े एवं अन्य चतुष्पाद के नाम नक्षत्र या वर्ण वेधे जाते हैं या पापाक्रांत होता है, तब वे वस्तुएं उस देश में

(कूर्म चक्र) की दिशाओं (स्थान में) दुर्लभ या महंगी होती है... (57)

विवरण : इस श्लोक में सर्वतोभद्रचक्र का व्यापार में या बाजार की तेजी-मंदी आदि कमी-वृद्धि के संदर्भ में कैसा या क्या उपयोग हो, यह बताया गया है। तेल यानी सर्व प्रकार के तैली पदार्थों, रत्नों, मिठाइयों यानी हर तरह की मिठास वाली वस्तुओं, और हाथी-घोड़ों आदि चार पैर वाले प्राणियों कि जिनका वाहन के रूप में उपयोग हो सकता है, देशकाल के अनुसार यहां मोटरकार जैसे वाहनों के रूप में माना जा सकता है। उपरोक्त सभी वस्तुओं के नाम, नक्षत्र या वर्ण का वेध हो तो देश के भीतर ये वस्तुएं महंगी होती हैं अथवा दुर्लभ बनती हैं। इन वस्तुओं की किल्लत देश किन हिस्सों या दिशा में होगी, यह जानने के लिए कूर्मचक्र के नौ अंगों में दिशा निर्देश दिया गया है। कछुए की अंगदर्शक दशाएं और नक्षत्र आकृति पर से जाने जा सकेंगे।

क्रूरवेध समयोगे यस्योग्रह संभवम्॥

तस्य मृत्युने सन्देहो रोगोवथाग रणेऽपिवा॥

अर्थ : जिसका उपग्रह संबंधित क्रूरग्रह का वेध होता है, तो उसकी रोग से या युद्ध में निश्चित मृत्यु होती है। इसमें कोई संदेह नहीं... (58)

विवरण : सर्वतोभद्रचक्र के संबंध में ज्योतिष शस्त्रकारों ने आठा उपग्रह कहे हैं। इन आठ में से किसी भी उपग्रह से पाठक के नाम, नक्षत्र या वर्ण का वेध हो तो फलस्वरूप जातक की मृत्यु होती है। यह मौत कहीं तो रोग, तो कहीं युद्ध के कारण होती है।

सूर्याभात्यंचमं धिज्णाये ज्ञेयं विद्युन्मुखमिथम्।

शूलं चाष्टममं प्रोक्तं सन्निपाते चतुर्दशम्॥

केतुरष्टादशे प्रोक्त उल्कास्यादेकविंशतौ।

धाविंशतितमे कम्पस्त्रेयाविंशे च वज्रकम॥

निर्धातस्व चतुर्विंशे उक्ता अष्टावुपग्रहा।

स्वस्थनि विघ्लदः प्रोक्त सर्वकार्येषु सर्वदा॥

अर्थ : सूर्य नक्षत्र से पाँचवां नक्षत्र विधुन्मुख नाम का उपग्रह माना जाता है। आठवां नक्षत्र शूल, चौदहवां सन्निपात, अठारहवां केतु, इक्कीसवां उल्का, बाइसवां कम्प, तैइसवां वज्र और चौबीसवां निर्धात। इस प्रकार आठ उपग्रह कहलाते हैं। ये आठ उपग्रह सभी कार्यों के लिए हमेशा

उनके योग्यकुल में विघ्न करने वाला माना जाता है।

विवरण : यहां ऊपर के तीन श्लोकों में आठ उपग्रहों का वर्णन किया गया है। जबकि इन उपग्रहों का समय भोगा जा रहा हो तब विघ्न और अनिष्ट उत्पन्न करके ये उपग्रह बाधा उत्पन्न करते हैं।

सूर्य नक्षत्र से पाँचों नक्षत्र को विधुन्मुख नाम का उपग्रह कहते हैं। सूर्य के नक्षत्र से आठवां नक्षत्र शूल नाम का उपग्रह माना जाता है। सूर्य के नक्षत्र से इक्कीसवें नक्षत्र को उल्का उपग्रह कहते हैं। सूर्य के नक्षत्र से बाइसवें नक्षत्र को कंप उपग्रह कहते हैं। सूर्य के नक्षत्र से तैइसवें नक्षत्र को वज्र उपग्रह कहा जाता है और सूर्य के नक्षत्र से चौबीसवें नक्षत्र को निर्धात उपग्रह कहा जाता है।

इस प्रकार विधुन्मुख, शूल, सन्निपात, केतु, उल्का, कम्प, वज्र या निर्धात उपग्रह का जब जातक के सूर्य नक्षत्र से भोग चल रहा हो तब जातक के कार्यों में विघ्न या अवरोध उत्पन्न होते हैं। इसलिए ग्रंथकार चेतावनी देता है कि उपरोक्त आठ उपग्रहों का समय भोग चल रहा हो तब जातक को किसी भी प्रकार के दुःसाहस में पड़ना नहीं चाहिए।

●●●

10

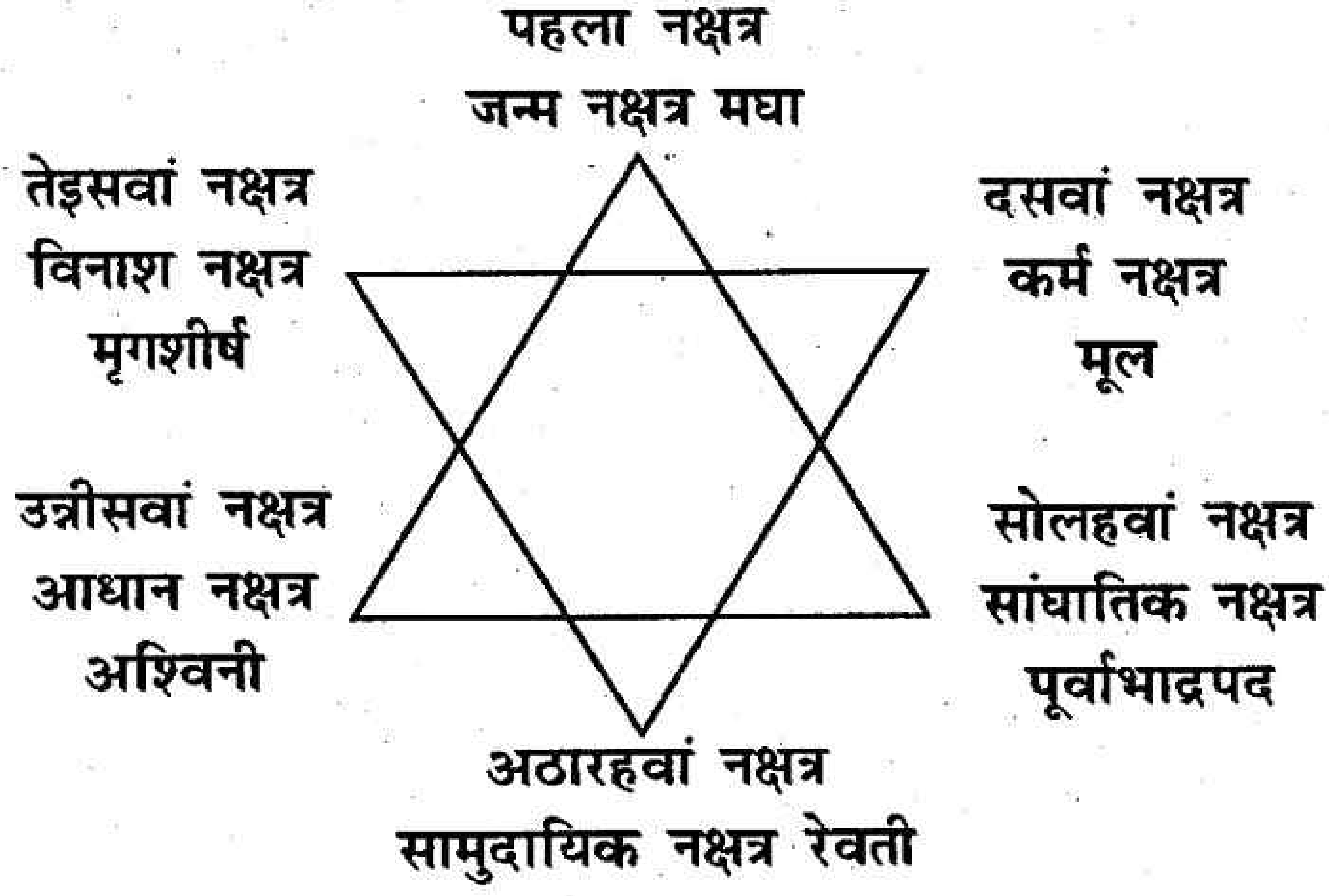
प्रजा-राजा नक्षत्र वेध

जन्मभू कर्म आधानं विनाशं, सामुदायिकम्।
साधातिकमिदं धिष्ण्यं षट्कं सर्वजनीकम्॥

अर्थ : जन्म, कर्म, आधान, विनाश, सामुदायिक तथा सांघातिक यह छह नक्षत्र प्रत्येक मनुष के लिए सामान्य है। ... (62)

विवरण : अपना जन्म जिस नक्षत्र में हुआ हो उस जन्म का नक्षत्र, इसी प्रकार कर्म सूचित करनेवाला नक्षत्र, आधान का नक्षत्र, विनाश का नक्षत्र, सामुदायिक नक्षत्र तथा सांघातिक नक्षत्र ये छह नक्षत्र प्रत्येक जीवात्मा के लिए महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं। अर्थात कि किसी भी जीवसृष्टि का विचार करते समय ये छह नक्षत्रों के वेध को खास ध्यान में लेना चाहिए। नीचे के चक्र पर से यह मुद्दा स्पष्ट होगा।

षड् नक्षत्र चक्र



ज्ञातिदेशाभिषेकैश्च नव धिष्ण्यानि भूपते।
वेधं ज्ञात्वा फलं ब्रूहि सौम्यैः क्रूरैः शुभाशुभम्॥

अर्थ : ज्ञाति, देश तथा अभिषेक ये तीन नक्षत्र अन्य लेने से राजा के लिए महत्त्वपूर्ण नौ नक्षत्र होते हैं। इन सभी नक्षत्रों के शुभ अथवा अशुभ ग्रहों के वेध को ध्यान में रखकर फल कहना चाहिए।... (63)

विवरण : इसके आगे के श्लोक में जन्म, कर्म, आधान, विनाश, सामुदायिक तथा सांघातिक ऐसे छह नक्षत्र सभी मनुष्यों के लिए सर्व सामान्य बताए। इसके उपरांत अब राजपुरुषों के लिए अतिरिक्त तीन नक्षत्र यहां बताए गए हैं जाति का नक्षत्र, देश का नक्षत्र तथा अभिषेक का नक्षत्र। ये तीन नक्षत्र राजा अथवा राजपुरुष के लिए अतिरिक्त नक्षत्र हैं। इस प्रकार उनके लिए नौ नक्षत्र महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं। राजा अथवा राजपुरुषों के लिए विचार करते समय इन नौ नक्षत्रों में उपरोक्त शुभ ग्रहों अथवा अशुभ ग्रहों से होने वाले वेध को ध्यान में रखकर उससे उत्पन्न होने वाले शुभ या अशुभ फल निर्णयपूर्वक कहना चाहिए।

जन्मभं जन्मनक्षत्रं दशमं कर्मसंज्ञकम्।
एकोनेविंशीधानं त्रयोविंशं विनाशीभम्॥
अष्टादशं च नक्षत्रं सामुदायिक संज्ञयम्।
सांघातिकं च विज्ञेयं ऋक्षं षोऽशमत्र हि॥

अर्थ : जन्म का नक्षत्र यह जन्म नक्षत्र, दशवां कर्म नक्षत्र, उन्नीसवां आधान, तेईसवां विनाश, अठारहवां सामुदायिक और सोलहवां नक्षत्र सांघातिक जानना।... (64, 65)

विवरण : किसी भी व्यक्ति के लिए छह महत्त्वपूर्ण नक्षत्र कौन-कौन से हैं उसकी समझ इस श्लोक से गीनने पर पहला, दसवां, सोलहवां, अठारहवां, उन्नीसवां और तेईसवां क्रमशः जन्म, कर्म, सांघातिक, सामुदायिक, आधान तथा विनाश के नक्षत्र माने जाते हैं। जो कि (आकृति) में दर्शाए चक्र द्वारा समझ में आएगा। गणना करते समय आपको अभिजीत नक्षत्र को गिनना नहीं है इस बात को याद रखना। द्रष्टांत के रूप में मघा नक्षत्र में जन्मे व्यक्ति के लिए पहला मघा, दसवां मूल, सोलहवां पूर्वाभाद्रपद, अठारहवां रेवती, उन्नीसवां अश्विनी और तेईसवां मृगशीर्ष

क्रमशः जन्म, कर्म, सांघातिक, सामुदायिक, आधान तथा विनाश के नक्षत्र माने जाते हैं। आकृति पर से यह बात स्पष्ट होगी।

विशेष टिप्पणी : अनुभव से जान पड़ा है कि जब किसी व्यक्ति के जन्म के नक्षत्रों की जानकारी न मिले तब उसके नामाक्षर की जानकारी न मिले तब उसके नामाक्षर के नक्षत्रों को ही उसके जन्म के नक्षत्र मानकर उसके आधार पर ही अन्य नक्षत्रों का विचार करने से भी योग्य मार्गदर्शन अवश्य मिलता है।

षड्विंशं राज्यभं प्राक्तं जातिनामस्वजातिकम्।
देशभं देशनामक्ष राज्यर्क्षमभिषेकभम्।।

मंतव्यों के अनुसार—

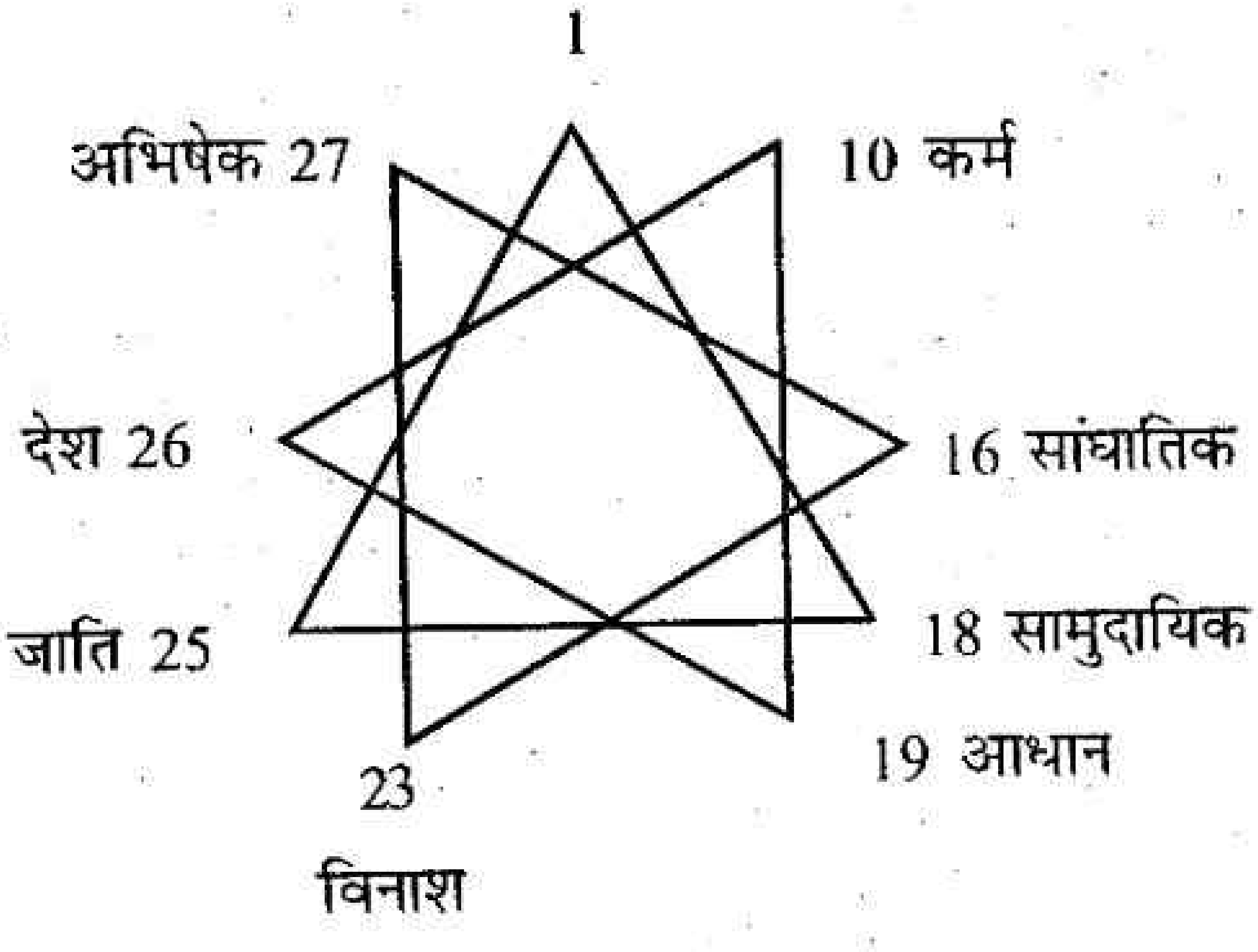
पंचविंशं जातिभ च सप्तविंशाभिषेकभम्।
षड्विंशंतितमं देशं जन्मऋक्षादि शोधयेत्।।

अर्थ : छब्बीसवां नक्षत्र यही राज्य नक्षत्र अथवा उसे ही अभिषेक नक्षत्र मानना। जाति के नाम के अक्षर पर से जाति नक्षत्र लेना तथा देश के नाम के अक्षर पर से देश का नक्षत्र देखना।... (66, 67)

मंतव्यों के अनुसार—पच्चीसवां नक्षत्र जाति नक्षत्र, छब्बीसवां देश नक्षत्र और सत्ताइसवां अभिषेक नक्षत्र मानना।

विववरण : राजा अथवा राजकीय पुरुषों के लिए तिरिक्त तीन नक्षत्र कौन से लेना उनकी स्पष्टता यहां की गई है। प्रजा के जन्म नक्षत्र से छब्बीसवां नक्षत्र उसके लिए राज्य नक्षत्र माना जाएगा अथवा अभिषेक

नौ नक्षत्र चक्र जन्म



का नक्षत्र राज्य नक्षत्र माना जाएगा। जाति के नाम के अक्षर पर से देश का नक्षत्र माना जाएगा, दूसरे मत के अनुसार राजा के लिए उसके जन्म नक्षत्र से गिनने पर 25, 26 और 27वें नक्षत्र क्रमशः जाति, देश तथा अभिषेक नक्षत्र माने जाते हैं। दोनों तरह से देखने पर ज्यादातर किस्सों में फल समान ही मिलता है इसलिए दोनों ही पद्धतियां प्रमाणभूत ही हैं।

राजा के नौ नक्षत्रों को निश्चित नियम के रूप में लेना हो तब पहला, 10वां, 16वां, 18वां, 19वां, 23वां, 25वां, 26वां तथा 27वां इस तरह से ले सकते हैं। यह बात आकृति पर से स्पष्ट होगी।

मृत्युस्माज्जन्मभे विद्धे कर्मभे क्लेश एव च।
आधानर्क्षे प्रवासस्यात् विनाशे बन्धू विग्रहः॥

अर्थ : जन्म नक्षत्र के वेध से मृत्यु, कर्म नक्षत्र के वेध से क्लेश, आधान नक्षत्र के वेध से प्रवास तथा विनाश नक्षत्र के वेध से बंधु विग्रह होता है।

विवरण : नक्षत्र वेध का फल दर्शाते हुए यहां ग्रंथाकार समझाते हैं कि जन्म नक्षत्र पर से वेध होता हो तो जातक का मृत्यु होता है और कर्म के नक्षत्र का वेध होता हो तो जातक को क्लेश अथवा कंकासेक वातावरण को भोगना पड़ता है अथवा झगड़े होते हैं। यदि आधान नक्षत्र वेधीत होता हो तो उससे जातक को प्रवास करना पड़ता है और यदि विनाश नक्षत्र का वेध होता हो तो भाई-बंधुओं के साथ विवाद और मन दुख के प्रसंग खड़े होते हैं। इस प्रकार इन सर्वसामान्य छह नक्षत्रों में से कोई भी चार नक्षत्र वेधक बने तो उससे जातक को क्या फल मिलेगा उसके विषय में यहां समझाया गया है।

सामुदायिकमेऽनिष्टं हानिः साधाति के तथा।
जाति भे कुलनाशश्च बन्धनं चाभिषेक भे॥

अर्थ : सामुदायिक नक्षत्र के वेध से अशुभ फल, सांघातिक नक्षत्र के नुकसान, जाति नात्र के वेध से कुल नाश तथा अभिषेक नक्षत्र के वेध से बंधन होता है।... (69)

विवरण : सर्वसामान्य छह नक्षत्रों में से चार नक्षत्रों के वेध का फल आगे के श्लोकों में बताने के बाद बाकी के दो नक्षत्रों के वेध का फल इस श्लोक में बताया है। उपरांत राजा अथवा राज पुरुषों के जाति नक्षत्र का तथा अभिषेक नक्षत्र के वेध का फल भी यहां बताया है।

ग्रंथकार कहते हैं कि यदि सामुदायिक नक्षत्र वेधीत होता है तो अनिष्ट होता है। अर्थात किसी भी विषय में यह वेध अशुभ और अनिच्छनीय फल देता है। और यदि सांघातिक नक्षत्र का वेध हो तो उससे जातक को नुकसान भोगने के प्रसंगों का सामना करना पड़ता है। राजा अथवा राज पुरुषों के लिए यदि जाति का नक्षत्र वेधीत हो तो उसके कुल का विनाश हो और अभिषेक नक्षत्र का वेध हो तो उससे उस राज पुरुष को बंधन में जाना पड़ता है।

देशेर्क्षे देशभङ्गश्च क्रूरैखं शुभै शुभम्।
उपग्रह समायानान्मृत्युर्भवति नान्यथा॥

अर्थ : देश का नक्षत्र वेधीत हो तब देश भंग होता है। इस प्रकार क्रूर ग्रहों के वेध का फल है। शुभ ग्रहों के वेध से शुभ फल होता है। इसके साथ उपग्रह का संयोग मृत्यु करनेवाला साबित होता है।... (70)

विवरण : राज पुरुषों के लिए यदि इनका देश नक्षत्र वेधीत हो तब उससे उनका देश तहस-नहस हो जाता है। इस प्रकार यहां तक ग्रंथकार ने जो फल बताया है वह फल क्रूर ग्रहों के वेध का फल है। अर्थात जब क्रूर ग्रह कोई नक्षत्रों को वेधीत करता है तब यहां बताए अनुसार अशुभ फल उत्पन्न होता है। और यदि वेध शुभ ग्रह से हुआ हो तब वह शुभफल ही देता है। क्रूर ग्रह से जब इन नक्षत्रों का वेध होता है तब उसी समय उसका उपग्रह के साथ में संयोग होता है। तब उसी समय उस वेध के फलस्वरूप में उस देश के मालिक अथवा राजा की या राज पुरुष की मृत्यु ही होती है ऐसा समझना चाहिए।

भयं भङ्गश्च घातश्च मृत्युर्भङ्गः पुरस्थितैः।
क्रूरै रेकादि पंचान्तैः युधिवेधे फलं भवेत्॥

अर्थ : युद्ध के समय में एक से पाँच क्रूर ग्रह नगर के स्थान पर वेध करते हों तो उससे उस राजा के लिए युद्ध में भय, भगदड़, घात, मृत्यु, राज्य भंग इस प्रकार क्रमशः फल जानना।... (71)

विवरण : ग्रंथकार यह समझाना चाहता है कि जिस समय युद्ध चलता हो उस समय अपने पुर (नगर) या राज्य पर क्रूर ग्रह का वेध होता हो तब उससे उस राज्य के राजा को अशुभ फल की प्राप्ति होती है। इन पाँच ग्रहों के वेध का अनिष्ट फल श्लोक में बताया है। लेखक ऐसा समझाते हैं कि यदि राज्य पर सूर्य का वेध होता हो तब उससे राज्य पर

भय आ खड़ा होता है। यदि वेध करने वाला ग्रह मंगल हो तब उससे सेना में आंतरिक टकराव (फूट-फाट) होता है और भगदड़ होती है। यदि शनि से वेध होता हो तब उसके कारण उस राजा समय पर घात हो अर्थात कि अपने शरीर पर मृत्युजनक हमला हो। राहु से वेध हो तब उसके कारण उस राजा की स्वयं मृत्यु हो और वेध करने वाला ग्रह केतु हो तब उसके फलस्वरूप संपूर्ण राज्य भंग हो अर्थात खेदानेमदान होता है।

राजाओं तथा राज पुरुषों के लिए भविष्यफल लिखनेवाले तथा आगाही करनेवाले तथा देश के भविष्य संबंधित अच्छे-बुरे प्रसंगों के लिए आगाही लेख लिखनेवाले विद्वान ज्योतिषविज्ञों के लिए इस पाठ का ज्ञान होना कितना आवश्यक है यह इन विषयों को जानने से पूरी तरह से समझ में आएगा।

●●●

11

ग्रहों का आधिपत्य

तिथि ऋक्षं स्वरं राशिषर्णं चैव तु पंचकम्।
यद्दिने विध्यते चन्द्रस्तछिने स्याच्छुभाशुभम्॥

अर्थ : जिस दिन तिथि, नक्षत्र, राशि, स्वर और वर्ण ये पांचों यदि शुभ या पाप ग्रह से वेधीत हुआ हो और चंद्र भी उस दिन वेधीत हुआ हो तब उस दिन कुछ शुभ या अशुभ होता ही है।... (72)

विवरण : वेध का फल कब और कैसा आएगा यह जानने के लिए इस श्लोक में ग्रंथकार ऐसा कहता है कि तिथि, नक्षत्र, स्वर, राशि और वर्ण अर्थात अक्षर (व्यंजन) ये पाँचों वेध में हो और उसके साथ यदि चंद्र भी वेधीत होता हो तब उस दिन कुछ भी शुभ अथवा अशुभ घटना अवश्य होती है। यदि वेध शुभ ग्रहों से होता हो तब उस दिन शुभ प्रसंग बनता है। परंतु यदि इन सभी का वेध करनेवाला अशुभ ग्रह हो तब उस वेध का फल अशुभ मिलता है और जिससे उस दिन अचूक अशुभ घटना बनती है।

ग्रंथकार इस बात को यहां अधिक स्पष्ट करता है कि उपरोक्त पांच वस्तुओं के वेध के उपरांत चंद्र का वेध हो यह भी आवश्यक है क्योंकि ऐसा होने से शुभ ग्रहों से होने वाले वेध का शुभ फल अथवा पाप ग्रह के वेध से होने वाला पाप फल अधिक असरकारक और बलवान बनता है।

अथाध्यं सम्प्रवक्ष्यामि यदुक्तं ब्रह्मयामले।
एकाशीति पदे चक्र ग्रहवेधाच्छुभाशुभम्॥

अर्थ : अब मैं 'ब्रह्मयामल ग्रंथ' के अर्ध पाठ में चर्चित 81 पदों

वाले चक्र में ग्रहों के वेध से होने वाले शुभ और अशुभ फल कहूंगा।... (73)

विवरण: यह सर्वतोभद्रचक्र 81 खानों का बना हुआ है जिसमें जब शुभ या अशुभ ग्रहों का वेध होता हो तब वह किन चीज या वस्तुओं के लिए अथवा स्थावर सम्पत्ति (जंगम), किसी भी वस्तु के लिए अथवा जगह के लिए क्या फल उत्पन्न करेगा इस विषय में 'ब्रह्मयावल' नाम के ग्रंथ में विस्तार से समझाया है, जिसे ग्रंथ के अर्ध पाठ में दर्शाई गई बातों का ग्रंथकार यहां उल्लेख करता है।

देशः कालस्ततः पव्यमिति त्रीव्यर्धनिर्णय।
चिंतनीयानि बेध्यानि सवकाले विचक्षणैः॥

अर्थः अर्घ्य निर्णय अनुसार विचक्षण पुरुषों को देशकाल तथा वस्तु जो कि तीनों वेधीत होने के योग हैं उनका विचार करना चाहिए।... (74)

विवरण: व्यापार की वस्तुओं के भाव में होने वाली घट-बढ़ बताने वाले विद्वानों पर विशेष कटाक्ष इस श्लोक में किया गया है। ग्रंथकार कहते हैं कि तीन वस्तुएं विशेष वेध होने योग्य हैं। अर्थात कि देश, समय और पण्य और अर्थात कि भौतिक पदार्थों की तेजी मंदी अथवा किसी भी प्रकार का सही या खराब फल निश्चित करने से पहले इन तीनों बातों पर होने वाले शुभ तथा अशुभ वेधों के फल को विद्वान व्यक्ति को हमेशा ध्यान में रखना ही चाहिए। आप उपरोक्त तीन बातों में से मात्र एक ही वस्तु का विचार करें तब आपके निर्णय में अनेक गलतियां होने की संभावना खड़ी होती हैं। विशेष करके वस्तुओं की बाजार कीमत में तेजी या मंदी को जानने में ऐसी भूल अवश्य होती है।

देशोथ मण्डलं स्थानंमिति देशस्त्रिधोच्यते।
वर्ष मासो दिनं चेतत्रिधा क्रालोपि कश्यते॥

अर्थः देश, मंडल तथा स्थान ये तीन देश के ही विभाग हैं जबकि वर्ष, मास और दिन ये तीन काल के प्रकार हैं।... (75)

विवरण: आगे के श्लोक में काल, देश और वस्तु का उल्लेख किया गया है। अब इन तीनों के लिए अधिक स्पष्टता करते हुए ग्रंथकार कहते हैं कि देश अर्थात कि जमीन का कोई भी बड़ा भाग परंतु देश शब्द से जमीन का छोटा टुकड़ा जैसे कि मंडल अथवा राजय भी समझ

सकते हैं और वही देश शब्द जमीन के किसी छोटे से छोटे टुकड़े के स्थान का अर्थात कि किसी गांव का भी निर्देश करता है।

उदाहरण के रूप में भारत यह देश है। गुजरात यह राज्य है और मणिनगर यह गांव है। परंतु जब देश शब्द का उपयोग होता है तब उसे इन सभी में से किसी भी एक के अर्थ देश शब्द का उपयोग कर सकते हैं।

इसी प्रकार जब काल शब्द का उल्लेख होता है तब भी काल के किसी भी विभाग के लिए यह शब्द उपयोग में लिया जाता है। अर्थात काल शब्द से हमें समझना पड़ेगा कि यह शब्द मात्र वर्ष के लिए ही नहीं परंतु किसी मास या दिन के लिए अथवा किसी निश्चित समय के लिए भी इस शब्द का उपयोग हुआ हो, अर्थात हम जब वेध का फल निश्चित करें तब देश और काल ये दो शब्दों का अर्थ योग्य ढंग से जहां जिस तरह उपयोग में लिया हो उस तरह करना यह आवश्यक बनता है और यदि ऐसा करने में भूल हो तब हमारे द्वारा निश्चित किए गए फल में गलतियां होने की संभावना रहती हैं।

इसके बाद के श्लोक में पण्य अर्थात वेध के कारण जिन चीज, वस्तुओं या भौतिक पदार्थों में शुभ अशुभ प्रभाव पैदा होता है उसके तीन विभागों का उल्लेख किया गया है।

धातुर्मूलं चजीवश्च इति पण्यं त्रिधा मतम्।
अथ त्रीक त्रिकास्यास्य वक्ष्यामिश्वेचरान्॥

अर्थः धातु, मूल और जीव ऐसे पण्य के तीन प्रकार हैं। अब यहां तीन-तीन के एक ऐसे तीन जोड़ोंग के स्वामी ग्रहों के विषय में कहा जाएगा। ... (76)

विवरणः इस श्लोक में पुण्य अर्थात कि भौतिक विषयों का उल्लेख किया है। अपना यह शास्त्र भौतिक वस्तुओं का तीन मुख्य विषयों में विभाजित करता है। धातु, मूल और जीव-इन तीन ही विभागों में सभी वस्तुओं का समावेश हो जाता है जिन वस्तुओं में जीव है वे अर्थात मनुष्य से लेकर पशु पक्षी या छोटे से छोटे जीव इन सभी को दर्शाने के लिए जीव शब्द उपयोग में लिया जाता है। जमीन में मूल साग-सब्जी आदि को मूल संज्ञा दी जाती है और उसके अलावा की तमाम वस्तुएं

धातु के रूप में मानी जाती है। यहां ग्रंथकार कहता है कि इसके बाद क्रमपूर्वक देश, काल तथा पण्य की वस्तुओं के मालिक कौन-कौन से ग्रह हैं अथवा कौन-कौन से नक्षत्र हैं वह यहां दर्शाया गया है।

देशेशा राहुमन्देज्या मण्डलस्वाभिनः पुनः।
केतु सूर्य सिताः स्थाननाथाश्चन्द्राश्चन्द्रजाः॥

अर्थः राहु, शनि और गुरु देश के स्वामी हैं। केतु, सूर्य और शुक्र मंडल के स्वामी हैं और चन्द्र, मंगल तथा बुध स्थान के मालिक माने जाते हैं। ... (77)

विवरणः ऊपर हमने काल के विभागों के विषय में देखा। अब यहां हमको ग्रंथकार स्थान अर्थात देश के विभागों के विषय में समझाते हैं। स्थान के छोटे बड़े विभागों पर किन-किन ग्रहों का आधिपत्य होता है उसे यहां समझाया है। कोई भी देश अर्थात एक ही सत्ता में समाविष्ट साम्राज्य (राष्ट्र) उसके अधिपति ग्रह राहु, शनि तथा गुरु माने जाते हैं। देश की अपेक्षा छोटे स्थान के विभाग वे छोटे-छोटे राज्य अथवा परगने हैं। ये ऐसे विभाग मंडल अथवा राज्य माने जाते हैं। इन स्थानों के (छोटी इकाइयों के) अधिपति के रूप में सूर्य, शुक्र तथा केतु को माना है। राज्य अथवा मंडल से छोटे विभाग जिला अथवा शहर आदि है। ऐसी इन छोटी इकाइयों को स्थान के रूप में पहचाना जाता है और इनका आधिपत्य चंद्र, मंगल तथा बुध को दिया है।

वर्णेषा राहुकेत्वाकी जीवो मासाधिपाः पुनः।
धौमार्कज्ञसीता ज्ञेयाश्चन्द्रः स्यादिवसाधियः॥

अर्थः राहु, केतु, शनि और गुरु वर्ष के स्वामी और मास के स्वामी के रूप में मंगल, सूर्य, बुध तथा शुक्र माने जाते हैं जबकि चन्द्र दिन का स्वामी है। ... (78)

विवरणः आगे के श्लोक में स्थान के विभागों तथा उसके मालिक अधिपति ग्रहों का वर्णन करने के बाद इस श्लोक में लेखक समय के विभागों के अधिपति ग्रहों के मुद्दे स्पष्ट करता है। ग्रंथकार लिखता है कि समय की छोटी इकाई दिन मानी जाती है और चंद्र उसका अधिपति है। दिन की अपेक्षा समय की बड़ी इकाई मास है। मास के अधिपति ग्रहों के रूप में मंगल, सूर्य, बुध तथा शुक्र को माना जाता है। वर्ष को

समय की सबसे बड़ी इकाई माना है और राहु, केतु, शनि तथा गुरु को उसका स्वामित्व दिया गया है।

छात्वीशा सौरीपानाश जीवेशा ज्ञेन्दुसूरयः।
मूलेशाः केतुशुक्रार्का इति पण्याधिषाः ग्रहाः॥

अर्थः शनि, राहु और मंगल धातु के स्वामी हैं। बुध, चंद्र और गुरु जीव के मालिक हैं और मूल के अधिपति केतु, शुक्र और सूर्य हैं।... (79)

विवरणः आगे के श्लोक में हमने स्थान तथा काल और उसके विभाग तथा विभागों के मालिक के विषय में जानकारी प्राप्त की। अब तीसरी वस्तु पण्य (ब्वउवकपजल) अर्थात कि खरीद-बेच हो सके ऐसे पदार्थ जैसे कि भौतिक पदार्थ, विश्व की तमाम स्थावर जंगम पदार्थ इन सभी को ज्योतिष की भाषा में पण्य कहते हैं।

ग्रंथकार ने पण्य वस्तुओं को मुख्य तीन विभाग किए–(1) धातु, (2) जीव ओर (3) मूल। हम इन तीन वस्तुओं के बारे में पहले विचार क़र चुके हैं। अब यहां धातु, जीव तथा मूल के अधिपति ग्रहों के विषय में जानेंगे।

धातु संज्ञावाले पदार्थ पर अपना प्रभुत्व रखनेवाले ग्रह विशेष करके शनि, राहु तथा मंगल माने जाते हैं। चंद्र, बुध और गुरु जीव संज्ञावाले पदार्थों पर अधिपति रखनेवाले ग्रह तथा मूल के अधिपति ग्रह केतु, शुक्र और सूर्य माने जाते हैं।

पुंग्रहा राहुकत्वर्कजीव भूमिसुता मताः।
स्त्रीग्रहौ शुक्रशशिनौ सौरि सौम्यौ नपुंसकौ॥

अर्थः राहु, केतु, सूर्य, गुरु तथा मंगल पुरुष ग्रह है, शुक्र और चंद्र स्त्री ग्रह है जबकि शनि और बुध नपुंसक हैं। ... (80)

विवरणः जाति अनुसार ग्रहों का भी वर्गीकरण शास्त्र में किया गया है। इसलिए ग्रंथकार यहां हमें ग्रहों की जाति का ख्याल देता है। ग्रहों की जाति के विषय में स्पष्टता करने के लिए इस श्लोक से ग्रंथकार ऐसा बताता है कि पाँच ग्रह पुरुष ग्रह हैं। उनके नाम हैं–राहु, केतु, सूर्य, गुरु तथा मंगल। इसी अनुसार ज्योतिषशास्त्र में चंद्र और शुक्र को स्त्री ग्रह माना है और बुध तथा शनि ये दो ग्रहों को ग्रंथकार ने नपुंसक ग्रह के रूप में मानकर नपुंसक जाति में इन दोनों का समावेश किया है।

सितेन्द्र सितवर्णेशौ रक्तेशै भौम भास्करौ।
पीतौ सौम्यगुरु कृष्णा राहुकेत्वर्कजा मताः॥

अर्थः शुक्र और चंद्र सफेद वर्ण के सूर्य और मंगल लाल वर्ण के बुध और गुरु पीत वर्ण के तथा शनि, राहु और केतु काले रंग के मालिक हैं।

विवरण देश, काल, पण्य आदि के अधिपति ग्रह बताने के बाद ग्रंथकार इस श्लोक में वर्ण के अधिपतियों को दर्शाते हैं। किस रंग पर किस ग्रह का अधिकार माना जाए इसे समझाते हुए ग्रंथकार यहां हमको समझाते हैं कि शुक्र और चंद्र ये दो ग्रह सफेद रंग पर अधिपति करनेवाले ग्रह हैं। लाल रंग पर मंगल और सूर्य अधिपत्य रखते हैं। बुध और गुरु ये दो ग्रह पीले रंग के मालिक माने जाते हैं और काले रंग की मालिकी राहु, केतु तथा शनि रखते हैं।

टिप्पणीः यहां केतु के रंग के लिए थोड़ा मतभेद है। लेकिन हमारे अनुभव के आधार पर केतु कत्थई अथवा लाल रंग का मालिक हो सकता है। इसके बावजूद हम ऐसा चाहते हैं कि वाचकवर्ग इसके संदर्भ में प्रयोग करें और स्वयं ही इस चर्चा का अंत ढूंढ़ लें। अपने स्व अनुभव से केतु का जो रंग अनुकूल लगे उस रंग का फलकथन में उल्लेख करना।

ग्रहों वक्रोदयें स्वांशे उदये च बलाधिकः।
देशादीनां स एकैकः स्वाभिखेटस्तराः मतः॥

अर्थः वक्री ग्रह का उदय हो तब तथा नौवें अंश में अपनी राशि में ही रहते हुए ग्रह का उदय हो तब ऐसा ग्रह अधिक बलवान माना जाएगा और वह एक ही ग्रह देशाधिपति है। ... (82)

विवरणः आगे हमने स्थान, काल, पण्य आदि के अधिपति के विषय में जानकारी प्राप्त कर चुके हैं। बहुत-सी जगहों पर एक ही मुद्दे के लिए दो या उससे अधिक अधिपतियों की संख्या दी गई है। ऐसे स्थान पर हमें अवश्य शंका होती है कि इसमें से किसे अधिपति मानना। इस विषय में अधिक स्पष्टता करने के लिए ग्रंथकार कहते हैं कि जहां एक से अधिक ग्रहों का अधिपत्य हो वहां जो ग्रह अधिक बलवान हो उसे ही अधिपति मानना। साथ ही ग्रहों का बलाधिक्य जानने के लिए भी इस श्लोक में ग्रंथकार ने खुलासा किया है कि उदय होने वाला वक्री ग्रह अथवा अपने ही नौवें अंश में उदयी होने वाला ग्रह अधिक बलवान और शक्तिशाली माना

जाएगा और इसलिए वस्तु के आधिपत्य के विषय में इस तरह जो ग्रह अधिक बलवान हो उसे ही अधिपति माना जाता है।

इस तरह ग्रंथकार ने ग्रहों के अधिपत्य के विषय में समझाया है तथा जहां एक से अधिक ग्रहों का अधिपत्य है वहां इन सभी में से किसका अधिपत्य मानन उसका यहां इस पाठ में ही ग्रंथकार ने खुलासा किया है।

इसके उपरांत अलग-अलग रोजाना के उपयोग की वस्तुएं किस नक्षत्र के अधिपत्य में आती हैं उसे जानने के लिए पुस्तक के अंत में दिए गए परिशिष्ट नं 1 को देखना।

●●●

12

ग्रहबल मात्रा

वक्रोच्यत्र: स्वध्म्येषु पूर्णवीर्यो भेवत्खग:।
मेषो वृषो मृग: कन्या कर्क मीन तुला धरा:।।

अर्थ: वक्र, उच्च के अथवा अपने स्थान में रहे हुए ये ग्रह पूर्ण बलवान माने जाते हैं। सूर्यादि ग्रह क्रमश: मेष, वृषभ, मकर, कन्या, कर्क, मीन और तुला में उच्च के जानना।... (83)

विवरण: आगे के पाठ में हमने ग्रहों के आधिपत्य के विषय में देखा। साथ ही हमने ऐसा भी देखा कि कुछ विषयों में एक से अधिक ग्रहों का आधिपत्य होता है और ऐसी परिस्थिति में जो ग्रह अधिक बलवान हो उसका ही मात्र अधिपत्य स्वीकार्य करना इस बात को भी ग्रंथकार ने समझया है।

अब प्रश्न यह होता है कि ग्रह का बलाबल किस तरह निश्चित करना? इस विषय में स्पष्टता करते हुए ग्रंथकार बताता है कि जो ग्रह वक्री हो उसे पूर्ण बलवान मानना। साथ ही अपने घर में रहा हुआ ग्रह भी पूर्ण बलवान माना जाता है। ग्रहों की उच्च राशि के विषय में बताते हुए ग्रंथकार कहता है कि सूर्य मेष में, चंद्र वृषभ में, मंगल मकर में, बुध कन्या में, गुरु कर्क में, शुक्र मीन में तथा शनि तुला में उच्च का ग्रह माना जाता है।

आदित्यादि ग्रहोच्या: स्मुर्नीचं यत्तस्य सप्तमम्।
परमोच्या दिशोशमा अष्टाविंशास्तिथादिया:।।
सप्तशविंस्तरा विंशा: सूर्यादीनां तथां शका:।
परमोच्यात्परं नीचमर्धचक्रान्त संख्यया।।

अर्थः ग्रहों के उच्च स्थान से सातवां स्थान नीच स्थान है। ग्रहों के अन्य सूर्य से क्रमशः 10, 3, 28, 15, 5, 27 तथा 20 अंश पर माने जाते हैं। ग्रहों का परम नीच इसी अनुसार उच्च से सातवीं राशि में उतने ही अंश में आता है। ... (84, 85)

विवरणः इन दो श्लोकों में ग्रंथकार ने ग्रहों की उच्च नीच स्थिति तथा उसकी परम उच्च और परम नीच स्थिति के विषय में समझाया है। आगे के श्लोक में ग्रंथकार ने ग्रहों की उच्च राशियां दर्शाइ है। अब यहां उनकी नीच राशि तथा परम उच्च और परम नीच के अंश बताए हैं।

ग्रंथकार कहते हैं कि सूर्य तुला राशि में नीच का होता है। चंद्र की नीच राशि वृश्चिक है। मंगल कर्क का नीच माना जाता है। मीन में बुध नीच का, मकर में गुरु, कन्या में शुक्र तथा मेष में शनि नीच का है। सूर्य मेष के 10 अंश में परम उच्च का तथा तुला राशि के 10 अंश में परम नीच का होता है। चंद्र वृषभ राशि के 3 अंश पर परम नीच का माना जाता है। मंगल मकर राशि के 28 अंश में परम उच्च का तथा कर्क राशि के 22 अंश में परम नीच का होता है। बुध कन्या राशि के 15 अंश परम उच्च है तथा मीन राशि के 15 अंश पर परम नीच माना जाता है। गुरु को कर्क के 5 अंश में परम उच्च में तथा मकर के 5 अंश में परम नीच में माना है। शुक्र मीन राशि के 27 अंश में परम उच्च और कन्या के उतने ही अंश में परम नीच होता है और शनि का परम उच्च तुला राशि का 20 है। जबकि परम नीच स्थान मेष राशि के 20 अंश माने जाते हैं। इस प्रकार ग्रहों के उच्च तथा परम नीच के विषय में नीचे के कोष्टक पर से अधिक स्पष्टता होगी।

ग्रह उच्च, नीच, परमोच्च तथा परम नीच

ग्रह	सूर्य	चंद्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
उच्च राशि	मेष	वृषभ	मकर	कन्या	कर्क	मीन	तुला
परम उच्च अंश	10	3	28	15	5	27	20
नीच राशि	तुला	वृश्चिक	कर्क	मीन	मकर	कन्या	मेष
परम नीच	10	3	28	15	5	22	20

उच्चान्नी चाच्चयत्तुर्मं समं स्थानं तटुच्यते।
तदग पृष्ठगे खेटे बलं त्रैराशिकं मतम्॥
उच्चस्थे च बलं पूर्णं नीचाशस्थे बलं दलम्।
स्वक्षेत्रस्थे बलं पूर्णं पादोनं मित्रभे ग्रहे॥

अर्थः ग्रहों के उच्च स्थान तथा नीच स्थान से चौथा स्थान उस ग्रह का समस्थान माना जाता है। इसके सिवाय के स्थान में रहे हुए ग्रह समस्थान माने जाते हैं। इसके सिवाय स्थान में रहे हुए ग्रह का बल त्रिराश गणित के नियम के आधार पर गिनना। पूर्ण उच्च में हुआ ग्रह पूर्णबल प्राप्त करे तथा पूर्ण नीच में हो तब उस ग्रह को आधा बल मिलता है। अपनी राशि में रहे हुए ग्रह को पूर्णबल मिलता है और मित्र राशि में रहे हुए ग्रह को पौने भाग का बल मिलता है।... (86, 87)

विवरणः ग्रहों का बल निश्चित करने की पद्धति ग्रंथकार ने यहां स्पष्ट तरीके से बताई है। ग्रंथकार के मतानुसार प्रत्येक ग्रह को दो प्रकार के बल मिलते हैं। पहला प्रकार उच्च बल और दूसरा प्रकार स्थान बल। उच्च बल के लिए स्पष्टता करते हुए ग्रंथकार कहता है कि ग्रह यदि अपनी परम उच्च की राशि के अंश में हो तब वह ग्रह पूर्णबल को प्राप्त करता है और यदि परम नीचे के राशि अंश में हो तब आधा बल प्राप्त करता है। यदि कोई ग्रह इन दोनों के बीच में हो तब उसका बल त्रिराशि की गणित के द्वारा गिन लेना चाहिए और इसके लिए ग्रह अपने परम उच्च या परम नीच की ओर या विरुद्ध से कितना दूर है उसका विचार करना पड़ता है।

दूसरे प्रकार के बल (स्थान बल की) के विषय में ग्रंथकार बताते हैं कि अपने स्थान में (राशि में) रहा हुआ ग्रह पूर्ण बल प्राप्त करता है और मित्र के घर में रहा हुआ ग्रह पौने भाग का बल प्राप्त करता है।

अर्ध समगृहे सेवं पादं शत्रुग्रहस्थिते।
क्रिशशिकवशात्ज्ञेयं अन्तरे तु बलं बुधैः॥

अर्थः समुस्थान में रहे हुए ग्रह को आधा बल मिलता है और शत्रु के घर में रहे हुए ग्रह को पौने भाग का बल मिलता है। इस तरह समझकर बाकी स्थानों में रहे हुए ग्रह का बल गणित से जान लेना।... (88)

विवरणः ऊपर के श्लोक के अनुसंधान में यह श्लोक लिखा है। अपने स्थान में रहा हुआ ग्रह पूर्ण बल प्राप्त करे, मित्र के घर में रहा हुआ

ग्रह पौने भाग का बल प्राप्त करे इस तरह समान ग्रहों के स्थान पर बैठा हुआ ग्रह आधा और शत्रु के घर में रहा हुआ ग्रह पौने जितने भाग का बल प्राप्त करता है। राशि बारह है। जिसमें से कुछ राशि ग्रह की अपनी मालिकी की है। कुछ अपने समकक्ष ग्रहों की मालिकी की है और कुछ शत्रु ग्रह की मालिकी की है। इसलिए ग्रहों के मित्र, सम और शत्रु ग्रह कौन से हैं तथा उनकी कौन सी राशियां हैं यह जानने से ये दूसरे प्रकार का बल तुरंत निश्चित हो जाएगा। अर्थात यहां गणित की आवश्यकता नहीं पड़ती है।

एवं देशादि नाथा ये ग्रहवेधे व्यवस्थिता:।
सु-हुद: शत्रवीं मध्याशिंचतनीया: प्रयन्नत:।।

अर्थ: इस तरह जो ग्रह देश काल आदि के मालिक हों और ग्रह वेध के साथ जुड़े हों उनके लिए मित्र, सम और शत्रु आदि का प्रयत्नपूर्वक विचार करना।... (89)

विवरण: अंत में फिर एक बार स्पष्ट करने के लिए और वाचकों तथा अभ्यासियों का ध्यान खींचने के लिए ग्रंथकार कहता है कि जिस ग्रह का वेध के विषय में संबंध हो तथा जो ग्रह देशकाल आदि के स्वामी लगते हों उनके फल का विचार करते समय अन्योन्य शत्रु, मित्र, सम आदि का उनकी पूर्ण स्थिति का ख्याल करके उस ग्रह के बलाबल का विचार करना और उसके बाद ही फल का निर्णय करना।

●●●

13

दृष्टिफल

विध्यं पूर्णदशा पथ्यंस्तन्यादेन फलं ग्रहः।
विदधात्यन्यथा ज्ञेयं फलं दृष्टयानुमानतः॥

अर्थः यदि ग्रह अपने से वेधित होने वाले को पूर्ण दृष्टि से देखता हो तब वह ग्रह अपनी दृष्टि के प्रमाण में फल देता है इसलिए वेध के फल का विचार करते समय दृष्टि के अनुमान को भी ध्यान में रखना चाहिए। ... (90)

विवरणः वेध करने वाला ग्रह जिसे वेधता हो उसे वह संपूर्ण दृष्टि से देखता हो तब खुद अपने मित्रादि संबंध बल आदि के आधार पर जो फल देना है वह संपूर्ण फल देता है। परंतु यदि वेध करनेवाला ग्रह पूर्ण दृष्टि से नहीं देखता हो तब उसकी दृष्टि के अनुसार अपने फल की मात्रा घटा देगा। इसलिए वेध करनेवाला ग्रह वेध्य वस्तु पर कितनी दृष्टि करता है इस बात को ध्यान में रखकर उसके अनुसार ही फल कथन किया जा सकता है।

वर्णादि स्वरराशीनां मेषाधे राशिमण्डले।
ग्रहदृष्टि वशान्सोऽपि वेधो वर्णादिके मतः॥

अर्थः वेधीत होनेवाला वर्ण, स्वर आदि की राशि हो वह राशि पर राशिचक्र अनुसार वेध करने वाले की जो दृष्टि हो वही दृष्टि वेधीत वर्ण स्वर पर मानना।... (91)

विवरणः वेधीत हुए वर्ण अथवा स्वर आदि की कौन-सी राशि है उसे जानना चाहिए। उसके बाद विचार करना चाहिए कि वेध करनेवाला ग्रह राशिचक्र के विषय में इस राशि पर किस प्रकार की और प्रमाण की

दृष्टि करता है। ग्रह के राशिचक्र पर मेषादि राशियों जो दृष्टि हो वही दृष्टि इस वर्णादि वेध के विषय में मानी जाएगी अर्थात इस तरह दृष्टि का विचार करके ही वेध के फल का निर्णय करना चाहिए।

स्वरवर्ण स्वचक्रोक्ताः तिथि वेधे च पीड़िताः।
तिथि वर्णेषु यो राशि स्तदृष्टौ स्थातिथीक्षणम्।।

अर्थः 'स्वरवर्ण' में स्वर और वर्ण की तिथि का वेध होने से उस स्वर और वर्ण का वेध होता है और उस तिथि वर्ण की राशि पर वेध करनेवाले ग्रह की दृष्टि हो तब वर्ण, स्वर तथा तिथि पर भी दृष्टि मानी जाती है।... (92)

विवरणः स्वरश्वर्ण चक्र में किस स्वर और किस वर्ण के साथ किस तिथि का संबंध है उसे दर्शाया गया है। अब जब उस तिथि का किसी भी ग्रह से वेध हो तब उस तिथि के संबंध में आनेवाले स्वर और वर्ण का भी वेध होता ही है। ऐसा समझ लेना है। साथ ही इस वेध करनेवाले ग्रह की जो दृष्टि पड़ती हो इस वेध करनेवाले ग्रह की जो दृष्टि पड़ती हो तब उस ग्रह की दृष्टि उस वर्ण और तिथि पर भी पड़ती ही है। ऐसा मानना।

अशुभो वा शुभो रापि शुक्ले निध्येतिथि ग्रहः।
सर्वं निजफलं दत्ते कृष्णपक्षे तु तद्लम्।।

अर्थः शुक्ल पक्ष में तिथि को वेधीत करनेवाला ग्रह अपना संपूर्ण फल देता है, जबकि कृष्ण पक्ष में आधा फल देता है।... (93)

विवरणः इस श्लोक में ग्रंथकार ने वेध करनेवाले ग्रह के वेध फल की मात्रा में घट-बढ़ दर्शाई है। शुक्ल पक्ष अथवा कृष्ण पक्ष में वेध हो तब क्या होगा उसे समझाते हुए ग्रंथकार कहते हैं कि कोई भी शुभ ग्रह यदि शुक्ल पक्ष में किसी तिथि को वेधीत करता हो तब उस समय वह अपना शुभ अथवा अशुभ फल संपूर्ण मात्रा में देता है। परंतु यदि वह ग्रह कृष्ण पक्ष में वेध करता हो तब उसके फल में कमी होती है और इससे शुभ ग्रह भी अपना शुभ फल आधा ही देता है और पाप ग्रह भी अपना अशुभ फल आधा ही देता है।

श्वेटस्य स्वांशके ज्ञेया पूर्णा दृष्टिः सदा बुधैः।
दृष्टि हीने पुनर्वेधे न स्यात्किंचिच्छुभाशुभम्।।

अर्थः अपने ही राशि अंश में रहे हुए ग्रह की दृष्टि पूर्ण मानी जाती है।

यदि वेध दृष्टि बिनाका हो तब उसका शुभ अथवा अशुभ कोई भी फल नहीं मिलता है।... (94)

विवरण: यहां ग्रंथकार दृष्टिफल के लिए अंत में बताते हैं कि ग्रह चाहे जहां से चाहे जिस स्थान में रहकर दृष्टि करे तो वह दृष्टि तो मानी जाएगी। फिर भी ग्रह यदि अपनी ही राशि और नौवें अंश में हो तो ही ग्रह की दृष्टि संपूर्ण बलवान मानी जाएगी। हमेशा वेध के फल के लिए दृष्टि बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। अर्थात कभी कोई ग्रह कोई स्थान काल इत्यादि का वेध करे परंतु वह ग्रह यदि अपने द्वारा वेधीत वस्तु को देखता न हो (दृष्टि करता न हो) तब उस वेध से कोई भी फल नहीं मिलता है।

इत्थेदं दृष्टि भेदेन निर्दिष्ट सकलं फलम्।
वर्णादि पंचके विद्धेग्रहो दत्ते शुभाशुभम्।।

अर्थ: वर्ण आदि पाँच का वेध होने से ग्रह अपनी दृष्टि के अनुसार निर्देशित होनेवाला संपूर्ण शुभ या अशुभ फल देता है।... (95)

विवरण: वर्ण, स्वर, राशि, नक्षत्र और तिथि इन सभी का अथवा सभी में से एक का भी जब वेध हो तब उनका वेध करनेवाला ग्रह अपनी दृष्टि के अनुसार जो कुछ अच्छा या बुरा फल देनेवाला हो वह पुरा फल देता है। इस प्रकार वेध करनेवाले ग्रह के फल का मुख्य आधार उस ग्रह की दृष्टि पर ही है ऐसा यहां दुबारा सूचित करके ग्रंथकार ग्रह की दृष्टि पर विशेष भार देते हैं। इसलिए सर्वतोभद्रचक्र के अनुसार होनेवाले वेध का फल देखनेवाले प्रत्येक ज्योतिषी को इस बात को विशेष रूप से ध्यान में लेना चाहिए।

●●●

14

विंशोपका

सौम्याः पूर्णदशा पश्यन्थिघ्नेन्वर्णादि पंचकम्।
फलं विंशोपकाः पंच क्रूरस्तु चतुरो दिशंत्॥

अर्थः सौम्य ग्रह वर्ण आदि पाँचों को पूर्ण दृष्टि से देखते हुए वेध करे तब विंशोपका फल पाँच माना जाता है और क्रूर ग्रह यदि वेधीत करे तब विंशोपका फल चार माना जाता है।... (96)

विवरणः सर्वतोभद्रचक्र के विषय में वर्ण, स्वर, राशि, नक्षत्र तथा तिथि इन पाँचों को यदि कोई शुभ ग्रह वेधे और साथ-साथ ये यदि इन पाँचों को पूर्ण दृष्टि से देखता हो तो उससे उत्पन्न होनेवाला विंशोपका फल पाँच माना जाता है। इसी अनुसार जब क्रूर ग्रह, वर्ण, स्वर, राशि, नक्षत्र तथा तिथि पर पूर्ण दृष्टि करता हो और उसी समय इन पाँचों का यदि वह वेध करता हो तब उससे उत्पन्न होनेवाला विंशोपका का फल मात्र चार माना जाता है।

वेधो वर्णादिके भावत् स्थानवेधे च यावती।
दृष्टि स्तदनुभानेन वाच्या विंशोपका बुधैः॥

अर्थः वर्णादिक के विषय में अथवा स्थानादिक के विषय में जब वेध हो तब जिस प्रमाण में दृष्टि हो उस प्रमाण में विंशोपका फल समझना। ... (97)

विवरणः वर्ण, स्वर, राशि, नक्षत्र तथा तिथि के लिए जैसे शुभ अथवा अशुभ वेध के लिए विंशोपका फल कहा गया ठीक उसी तरह स्थान, काल तथा पण्य के लिए भी इस प्रकार का विंशोपका फल देख सकते

हैं और उसके लिए भी ऊपर अनुसार शुभ ग्रह के पाँच और अशुभ के चार विंशोपका ले सकते हैं। यह तो हुई पूर्ण दृष्टि की बात परंतु जब वेध करनेवाला ग्रह पूर्ण दृष्टि से वेध्य वस्तु को देखता न हो तब ग्रह की कितनी दृष्टि है उसका विचार करके उसके प्रमाण में विंशोपका का फल गणित से नक्की करना चाहिए और इस तरह से शुभ तथा अशुभ फल जानना चाहिए।

एवं विंशोपका यत्र संभवन्ति शुभाशुभाः।
अन्योन्य शोधयेत्तेषां शेषं ज्ञेयं शुभाशुभम्॥

अर्थः इस प्रकार जहां-जहां शुभ और अशुभ विंशोपका मिलते हों वहां उन्हें प्राप्त करके और शुभ और अशुभ की परस्पर घटाने के बाद जो शेष रहे वह शुभ अथवा अशुभ विंशोपका माना जाता है। ... (98)

विवरणः आगे के श्लोक में विंशोपका किस तरह निश्चित होता है वह दर्शाया तथा वह विंशोपका शुभ माना जाय या अशुभ माना जाय यह बताया। अब यहां ग्रंथकार यह बताता है कि इस तरह अलग-अलग जितने ग्रहों से विंशोपका निश्चित करना चाहिए। उसके बाद शुभ विंशोपका हो उसका जोड़ करना और अशुभ विंशोपका का भी जोड़ करना। इस तरह शुभ और अशुभ विंशोपका मिले उसके बाद ही इन दोनों का अंतर निकालना। इस अंतर के द्वारा अधिक शुभ अथवा अशुभ जो आए उसके अनुसार फल की गणना करनी चाहिए।

वर्तमानार्ध विंशांशकल्पना स्तेषु च क्रमात्।
वर्तमानार्धके देया पाल्या चैव शुभाशुभे॥

अर्थः किसी भी विषय की तेजी-मंदी निश्चित करने के लिए जिस दिन के लिए निश्चित करना हो उस दिन सुबह के जो भाव हों उसके 20 भाग करने। इसके बाद ग्रहों के वेध के आधार पर ही जो विंशोपका प्राप्त हुए हों उस प्रत्येक विंशोपका के तुल्य एक भाग मानकर मूल भाव के उतने 20वें भाग का चालु भाव में घट-बढ़ करना। अर्थात विंशोपका शुभ हो तब घटाना और अशुभ हो तो जोड़ना।... (99)

विवरणः वस्तु की तेजी अथवा मंदी जानने के लिए यह अति उपयोगी श्लोक है और तेजी मंदी का व्यवसाय करनेवाले बाजारू रुख देनेवाले अथवा बाजार के भाव निश्चित करनेवाले प्रत्येक व्यक्ति के लिए इसकी जानकारी अत्यंत आवश्यक है। किसी भी वस्तु के भाव में तेजी

होगी या मंदी और कितनी तेजी या मंदी होगी उसे जानने के लिए विंशोपका विशेष आवश्यक है। विंशोपका निकालने की पद्धति तथा वह शुभ है या अशुभ वह हम आगे देख चुके हैं। अब आगे क्या करना चाहिए उसे यहां दर्शाया गया है।

कोई भी वस्तु महंगी होगी या सस्ती वह जिस दिन, मास या वर्ष के लिए जानना हो वह वर्ष, मास या दिन जिस पल से शुरू होता हो उस समय के विंशोपका ऊपर बताए अनुसार उस वस्तु के लिए निश्चित करना यहां एक चरण पूरा हुआ। अब दूसरी बात।

वस्तु का उस समय का जो भाव हो उसे 20 द्वारा भाग देना। ऐसा करने के बाद जो आए उस एक भाग को एक विंशोपका के समान मानना। अब कुल जितने विंशोपका आए हों उसके द्वारा इस एक भाग का गुणा करना। इस तरह करने से जो परिणाम आए उतनी वस्तु सस्ती या महंगी होगी। यदि विंशोपका शुभ आते हों तथा वस्तु के भाव में वृद्धि होगी अर्थात कि तेजी होगी और यदि विंशोपका अशुभ आए तब उस वस्तु के भाव में कमी होती है अर्थात वस्तु के भाव में मंदी आती है ऐसा जानना और इस तरह ही नया भाव किस ऊंची या नीची पर रहेगा यह जानना।

देवध्वंसः प्रजापीड़ा नृपतिप्रवधस्तथा।
यत्रावृष्टिश्च तत्रस्यादुर्भिक्षं मंडले स्फुटम्॥

अर्थः जिस स्थान में (मंडल में) देव की मूर्ति का नाश, प्रजा को पीड़ा, राजा अथवा ब्राह्मण का वध और बरसात का अभाव हो उस देश में निश्चित ही अकाल पड़ता है। ... (100)

विवरणः किसी भी देश, राज्या या स्थान में अकाल पड़े तब उसका क्या कारण है उसे बताने के लिए ग्रंथकार यहां स्पष्ट करके बताते हैं कि जिस देश में देवताओं की मूर्ति का नाश हो, उस देश में अकाल पड़ता है, जिस देश की प्रजा को परेशानी होती हो उस देश में अकाल पड़ता है। जिस देश में राजा की अथवा ब्राह्मण की हत्या होती हो उस देश में भी अकाल पड़ने की संभावना मानी जाती है और इसी तरह जब कोई भी देश में अनावृष्टि हो अर्थात योग्य प्रमाण में बारिश न पड़े उस देश में भी अकाल पड़ता है।

अकालेऽपि फलं पुष्पं वृक्षाणां यत्र जायते।
स्वजातिभांस भुकिश्च दुर्भिक्ष तत्र शैश्वम्।।

अर्थः वृक्षों पर असमय फल फूल लगे और जानवर जब अपनी ही जाति का मांस खाएं तब उस देश में अकाल पड़ता है।... (101)

विवरणः ग्रंथकार अकाल के लक्षणों का अधिक वर्णन करते हुए बताते हैं कि जब वृक्षों पर समय बिना अर्थात ऋतु बिना फल फूल आए तब और इसी तरह जब अन्य मांसभक्षी प्राणी (विशेष करके चूहे, बिल्ली, सांप, मछली, कुत्ते–ये पाँच तो अपनी जाति के प्राणी का मांस हमेशा खाते हैं जिससे उन्हें अपवाद मानना) अपनी जाति के प्राणी का ही मांस खाएं, इस प्रकार पशु, पक्षी, वृक्षों आदि में प्रकृति के नियमों से जब विपरीत बातें मालूम पड़े तब ग्रंथकार कहता है कि उसे अकाल का लक्षण समझना। जिस देश अथवा स्थानों में ऐसी बातें दिखाई पड़ें उन स्थानों अथवा देशों में थोड़े ही समय में अकाल पड़ता है।

पराचक्रागमस्तत्र विग्रहश्च स्वराजके।
ऋतो र्विपर्ययो यत्र दुर्भिक्षं मण्डले भवेत।।

अर्थः जहां ऋतु का विपर्यय हो (विरोधाभास हो) उस मंडल में दूसरे राज्य की सेना आती है, राज्य में लड़ाई होती है और अकाल पड़ता है। ... (102)

विवरणः इस श्लोक में ग्रंथकार ऐसा समझाते हैं कि जब किसी भी देश में ऋतुओं का प्रभाव अपने प्राकृतिक नियमों से विपरीत लगे अर्थात ठंड में गर्मी पड़े, बारिस में तपन हो, ठंडी में बारिस हो, इस प्रकार ऋतुएं उलट–सुलट होने लगें तब उस देश पर आफत मानी जाती है। दूसरे देश की सेना उस राज्य पर चढ़ाई करे, अथवा अपने राज्य में ही अंदर ही अंदर झगड़े हों और उस देश पर अकाल का भय आ पड़ता है।

भूमिकम्पो रजःपातो स्कवृष्टिश्च जायते।
देशे सर्वसुखोपेते वेधादेवं वदेद्बुधः।।

अर्थः सभी सुखों से संपन्न देश में भी वेध के कारण धरती कंप, धूल की बारीस या खून की बारीस कहनी चाहिए। ... (103)

विवरणः क्रूर ग्रह के वेध के फल का वर्णन करते हुए ग्रंथकार यहां बताते हैं कि जो देश क्रूर ग्रंह के वेध का निमित्त बनता है उस देश

में धरती कंप जैसी घटना बनती है। साथ ही उस देश में आकाश में से धूल, राख या मिट्टी की बारिस होती है अथवा तो ऐसे वेध वाले देश में काई बार खून, बाढ़, मांस या विष्टा की बारिस होती है। इस प्रकार क्रूर ग्रह के वेध के कारण वेधीत देश में अनेक प्रकार की अनिच्छनीय घटनाएं घटती हैं और इसके कारण उस देश की प्रजा अनेक प्रकार की मुश्किलें और यातनाएं भोगती है। क्रूर वेध का यह फल अवश्य लागू पड़ता है फिर भले ही वह देश बहुत ही संपन्न हो।

वृक्षाणां जायते वृद्धिः स्वकाले फलपुष्पयो।
सुभिक्षं क्षेममारोग्यं प्रजानी तत्र जायते॥

अर्थः अपने योग्य समय पर जिस देश में फल, फूल, वृक्ष आदि की वृद्धि हो उस देश में प्रजा का कल्याण होता है तथा स्वास्थ्य बढ़ता है। ... (104)

विवरणः श्लोक 101 से 103 में अकाल के लक्षण कहने के बाद अब ग्रंथकार सुकाल के लक्षण बताता है। अकाल के लक्षण से सुकाल के लक्षण बिलकुल अलग है। इसकी स्पष्टता करते हुए इस श्लोक में ग्रंथकार कहते हैं कि जब वृक्षों की वृद्धि हो अर्थात अधिक प्रमाण में वृक्ष उगे और ये वृक्ष अपने समय में अर्थात कि प्रकृति के क्रम अनुसार ऋतु अनुसार ही व्यापक प्रमाण में फल, फूल आदि दे तब उस देश में सुकाल है ऐसा समझना। इसके उपरांत उस देश की प्रजा के आरोग्य में और कल्याण में तथा सुख में भी अनेक प्रकार से वृद्धि होगी ऐसा समझना।

इस प्रकार इस श्लोक में प्रजा तथा प्रजा के नेताओं के लिए एक दार्शनिक सूचन किया है और ग्रंथकार परोक्ष रूप से बताता है कि जिस जगह पर वृक्ष और वन जीवों का नाश हो वहां उस देश में आपत्तियां बढ़ती हैं और जहां वन जीव तथा वृक्षों की प्रकृति के क्रम अनुसार वृद्धि हो उस देश में वहां की प्रजा अनेक प्रकार से सुखी होती है।

स्वचक्रं पश्चक्रं च न क्रदाचिन्प्रजायते।
बांधवाः सुहृक्ष्स्तत्र शुभानां वेधसंभवे॥

अर्थः शुभ ग्रहों का वेध होने से अपने राज्य में शत्रु सैन्य प्रवेश नहीं कर सकता है और भाई-बंधुओं में भी मित्रता रहती है।... (105)

विवरणः श्लोक 103 में क्रूर ग्रह के वेध का फल बताने के बाद यहां

इस श्लोक में ग्रंथकार शुभ ग्रह के वेध का फल प्रस्तुत करते हैं। ग्रंथकार कहते हैं कि यदि कोई देश शुभ ग्रह के प्रभाव में आता है तब उस समय पर उस देश में सब कुछ शुभ होता है। उस देश में शत्रु की सेना कभी भी प्रवेश नहीं कर सकती है अर्थात अपना राज्य सभी प्रकार से आत्मनिर्भर रह सकता है। इसके उपरांत उस राज्य में सभी परिवारों में और मित्रों के बीच भी सुंदर भाईचारा खड़ा होता है कि जिससे कोई दो व्यक्ति एक दूसरे के भाई हैं या मित्र हैं यह समझ नहीं सकते। अर्थात शुभ ग्रह के वेध के प्रभाव से उस राज्य की प्रजा में एक दूसरे के प्रति अलौकिक प्रेम का वातावरण प्रगट होता है और सुख में वृद्धि होती है।

इस प्रकार यहां ग्रंथकार शुभ ग्रह के वेध का फल कहकर अपने वक्तव्य को समाप्त करने के लिए अब दूसरे पाठ में सर्वतोभद्रचक्र के विषय में भी अंत में थोड़ा कहकर वाचक को इस चक्र की महत्त्वता समझाते हैं।

●●●

15

चक्र की महत्त्वता

दीपो यथा गृहस्यान्तरुद्योतयति सर्वतः।
तथे दं सर्वतोभद्रचक्रे ज्ञानप्रकाशकम्॥

अर्थः जैसे एक दीप घर के अंदर चारों तरफ प्रकाश देता है वैसे ही यह सर्वतोभद्रचक्र ज्ञान रूपी प्रकाश फैलाता है।... (106)

विवरणः ग्रंथकार सर्वतोभद्रचक्र की महत्त्वता दर्शाने के लिए इस श्लोक में उसकी दीपक के साथ समानता करते हैं। जैसे एक दीपक जलाने से वह दीपक पूरे घर के कोने-कोने में से अंधकार को उलीच देता है और उसके स्थान पर जिस तरह चारों तरफ प्रकाश प्रकाश कर देता है वैसे ही ग्रंथकार कहते हैं कि सर्वतोभद्रचक्र भी यदि उसे सही तरह से समझकर उपयोग में लिया जाए तब चारों तरफ वह ज्ञान का प्रकाश फैलानेवाला है।

विनाबलिं विना होमं कुमारीपूजनं विना।
शुभ ग्रह विना देपि चक्र राजं न वीक्षयत्॥

अर्थः हे देवी, बलिदान, होम और कुमारी का पूजन किए बिना और शुभ ग्रहों को देखे बिना इस चक्र का देखने के लिए उपयोग न करना। ... (107)

विवरणः इस चक्र की समझ देते समय भगवान सदाशिव ने पार्वती जी को जो बात ही है वह बात रुद्रयामल नाम के ग्रंथ में पंजीकृत है और उसका ही आधार लेकर ग्रंथकार यह श्लोक लिया है। इस श्लोक में शंकर भगवान पार्वती को उद्देश्य करके विश्व की जानकारी के लिए

कहते हैं कि हे देवी, इन सभी चक्रों के राजा के स्वरूप सर्वतोभद्रचक्र का जब फल कथन के लिए उपयोग करना हो तब सर्व प्रथम चक्र की पूजा करनी तथा उसके साथ बलिदान अर्पण करना और योग्य विधि से ग्रह का होम करना। उसके बाद नौ वर्ष की अंदर की उम्रवाली नौ कुमारिकाओं का पूजन करना। इतनी विधि करने के बाद ही इस चक्र का उपयोग करना चाहिए। यदि उपरोक्त विधि करे बिना इस चक्र का फलकथन के लिए उपयोग किया जाए तो उससे चक्र देखनेवाले और पूछनेवाले दोनों के लिए अशुभ फल का सूचन होता है।

अविधार्यत्तया पृच्छेपृच्छक: कथकस्तथा।
द्वाधिमौ विघ्नदौ पौक्तावत्र देवि न संशय:।।

अर्थ: हे देवी। अज्ञानता में कोई मनुष्य इस चक्र के आधार पर पूछे और कोई उसके आधार पर फल कथन कहे तब वह दोनों के लिए विघ्नकारक बनता है।... (108)

विवरण: भगवान सदाशिव पार्वती जी को अधिक स्पष्टता करते हुए लोक कल्याण के लिए कहते हैं कि हे देवी, यदि कोई व्यक्ति कोई देवज्ञ ज्योतिषी के पास जाकर अज्ञानता में पूरी विधि किए बिना ही चक्र के आधार पर फल कथन करने के लिए प्रश्न करे और ज्योतिषी भी उसी प्रकार अज्ञानतावश चक्र से निरीक्षण करने तथा जवाब देने बैठे तब ऐसा होने से पूछनेवाले तथा फलकथन करने वाले दोनों के लिए यह बात विघ्नकारी बनती है।

जातकंस्यतिथिं राशिं विज्ञेयौ नामतो ज्वलौ।
अज्ञात जातकानां तु समस्तमभिधानत:।।

अर्थ: जातक के नाम के आधार पर उसकी तिथि, राशि आदि जानना अथवा उससे पूछकर जानना परंतु जिस जातक के तिथि, राशि, अज्ञात हो उसके चालू (व्यवहारिक) नाम से जानना।... (109)

विवरण: चक्र के आधार पर फल कथन करने के लिए जातक की जन्मतिथि, जन्मराशि आदि की आवश्यकता पड़ती है। इस विषय में स्पष्टता करते हुए ग्रंथकार कहता है कि जातक के नाम पर से अथवा उसे पूछ कर यह बात जान लेनी। परंतु जब किसी जातक को अपनी जन्मतिथि या जन्मराशि का कुछ पता न हो तब ऐसे प्रसंग पर उस व्यक्ति के चालु (व्यावहारिक) नाम पर से उसकी राशि, तिथि आदि निश्चित करना।

विस्तारेण भयाख्यातं ब्रह्मयामले।
न देयं यस्यलस्यापि चक्रभेतत्सुनिश्चितम्॥

अर्थः ब्रह्मयामल ग्रंथ में जिसका वर्णन किया है इस चक्र को मैंने आपको कहा। यह सचोट चक्र चाहे जिसको देना नहीं चाहिए। ... (110)

विवरणः अंत में भगवान देवी पार्वती को कहते हैं कि हे देवी! ब्रह्मयामल में सर्वतोभद्रचक्र का जो वर्णन किया है वह मैंने आपको यहां विस्तारपूर्वक समझाया है। संपूर्ण ज्ञानी व्यक्ति यदि इस चक्र का उपयोग करे तो वह इसके आधार पर सचोट फलकथन कर सकता है। इसलिए सचोट ज्ञान से समर ऐसा यह चक्र चाहे जिस व्यक्ति को नहीं देना चाहिए।

इस प्रकार सर्वतोभद्रचक्र कि जो संसार के तमाम जड़ तथा चेतन पदार्थों के भूत, भविष्य साथ ही वर्तमान पर सचोट प्रकाश डालने की क्षमतावाला है उसका सर्वसार यहां समाप्त होता है।

●●●

परिशिष्ट-1

नक्षत्र और जणस

1. **कृत्तिका** : जौ, मणी, हीरा, चावल, धातु, तिली।
2. **रोहिणी** : सर्वधान्य, धातु, ऊन के पुराने वस्त्र, रसकस।
3. **मृगशीर्ष** : चौपाया जानवर, रत्न, तुवर, लाख, धान्य।
4. **आर्द्रा** : तेल, नमक, रसकस, चंदन, क्षार।
5. **पुनर्वसु** : रुई, कपास, जौ, सोना, चांदी, रेशम, बाखरी सिंदूर।
6. **पुष्य** : घी, सोना, चांदी, चावल, नमक, हींग, सरसों।
7. **आश्लेषा** : साकर, सोंठ, चावल, मजीठ, गुड़, मिरची, गेहूं।
8. **मघा** : अलसी तेल, तिली, घी, गुड़, चना।
9. **पूर्वाफाल्गुनी** : जौ, बाजरी, ऊन, चांदी, तेल।
10. **उत्तराफाल्गुनी**: चावल, भग, उड़द, लहसुन, सेंधा नमक।
11. **हस्त** : चंदन, कपूर, देवदार, सुगंधीयुक्त वस्तुएं, कंदमूल।
12. **चित्रा** : सोना, रत्न, प्रवाल, भग, उड़द, घोड़े, वाहन।
13. **स्वाति** : कपास, सुपारी, मिर्ची, तेल, राई, हींग, खजुर।
14. **विशाखा** : जौ, चावल, गेहूं, भग, राइ, धान्य, मसूर।
15. **अनुराधा** : चावल, चना, तुवर, मह।
16. **ज्येष्ठा** : गुड़, कपूर, पारा, हींग, कांसा, गुगल, लाख।
17. **मूल** : कपास, चांदी, रूपा, रस, धान, सींधव।
18. **पूर्वाषाढ़ा** : चावल, घी, घास, कंद, सुरमा।

19. उत्तराषाढ़ा : लोहा, चौपाया जानवर, घी, धातु।

20. अभिजीत : मेवा, तेजाना, भग, घोड़ा।

21. श्रवण : अनाज, सुपारी, पीपला मूल, अखरोट।

22. धनिष्ठा : गेहूं, सोना, चांदी, धातु, पैसा (लोन), जेवरात।

23. शततारा : तेल, शराब, अर्क, कोदश, आंवला, पेड़ की छाल।

24. पूर्वाभाद्रपद : धातु, अनाज, दवाई, बाजरी, जौ, जावंत्री, देवदार।

25. उत्तराभाद्रपद: चावल, शक्कर, गुड़, घी, मणि, मोती, रत्न।

26. रेवती : मणि, मोती, सुपारी, फल, करियाण, चांदी।

27. अश्विनी : चावल, घास, एरंडा, खच्चर, ऊंट, घी, अनाज, वस्त्र।

28. भरणी : अनाज, जौ, बाजरी, मिर्ची, औषध।

उपस्थित जणस में शुभ ग्रह का वेध मंदी करता है। अशुभ ग्रह का वेध तेजी करता है। शेयर बाजार में इससे उलटा समझना।

●●●

परिशिष्ट-2

कूर्मचक्र और देश

1. **नाभि :** मिथला, साकेत देश, चंपारण्य, कौशांबी, गया, विंध्या, कान्यकुब्ज, प्रयाग इत्यादि।
2. **मस्तक :** पंचराष्ट्र, कामरू, मगध, नर्मदा का किनारा, मेवासा।
3. **दाहिना आगे का पैर :** अंग, वंग, कलिंग, जयन्द्र, वराटका, कौशल, उड़ीसा।
4. **दाहिनी कुक्षि :** दर्दुर, महेन्द्र, सिंहल, तापी, नदी, लंका, त्रिकुट, मलय, श्रीपर्वत, किष्किंधा।
5. **दाहिना पीछे का पैर :** नासिका, सोरह, मालव, भृगुकच्छ, प्रकाश कोकाण, खेड़ा, मेदिर (मराठा देश)।
6. **पूंछ :** परित, अर्बुद, कच्छ, उज्जैन, पूर्वमालव, सौराष्ट्र, सिंधद्विप, द्वारिका।
7. **बायां पीछे का पैर :** गुजरात, मारवाड़, यमुना का प्रदेश, जलंधर, वराट, रणप्रदेश, समुद्र।
8. **बायीं कुक्षि :** नेपाल, कीट, काश्मीर, खुरासान, माथुर, खशकेदार, हिमालय आदि।
9. **बायां आगे का पैर :** गंगा द्वार, कुरुक्षेत्र, हस्तिनापुर, अश्वचक्र, एक पाद, गजवर्ण आदि।

●●●

परिशिष्ट–3

वेध देखने की पद्धति

इस चक्र में वेध जानने के लिए नीचे के भेद को ध्यान में रखना। ऐसा करने से सफलता से वेध जान सकोगे।

1. एक बड़े कागज पर अथवा पाटिये पर मुख पृष्ठ पर बताई गई आकृतियां बताए अनुसार चक्र का चित्र बनाना।
2. स्वर, तिथि, नक्षत्र, राशि तथा अक्षर इन पाँच मुख्य वस्तुओं के वेध देखे जाते हैं तो इन पांच के लिए चक्र के खाने में आ सके उस माप की पाँच टिकड़ीया अथवा पत्थर की कुकड़ी बनाना जिससे जो व्यक्ति के लिए देखना हो उसके लिए योग्य खाने में कुकड़ी रखने से किस स्थान पर वेध जानना है उसका पता चलता है।
3. ग्रह नौ हैं, इसलिए इन ग्रहों की भी नौ कुकड़ीयां बनाना और प्रत्येक के ऊपर सू–चं आदि ग्रह सूचक अक्षर लिख लेना।
4. अब जिस व्यक्ति, देश अथवा पशु–पक्षी या वस्तु के लिए विचार करना हो उसके जन्म के नाम से या चालू नाम से जो अक्षर, स्वर, तिथि, नक्षत्र और राशि आती हो उसके खाने में अक्षर, स्वर आदि लिखी हुई पाँचों टिकड़ियां उचित खानों में रख दो और उसी अनुसार पंचांग के आधार पर ग्रह जिस नक्षत्र पर हो उस नक्षत्र के खाने में ग्रह की टिकड़ियां रखो। ऐसा करने से कौन–सा ग्रह कहां वेध करता है उसका नजर मात्र से पता चल जाएगा।

5. किसी भी स्थान से तीन वेध खड़े होते हैं परंतु मंगल, बुध, गुरु, शुक्र और शनि कहां वेध करते हैं वह उसकी गति के आधार पर निश्चित होता है इसे याद रखना। वक्री ग्रह का वेध दाहिनी तरफ, शीघ्र गति का वेध बाईं तरफ तथा मध्यगामी का सामने वेध होता है।
6. राहु, केतु, सूर्य तथा चंद्र इन चारों ग्रह का वेध हमेशा तीनों तरफ होता है।
7. बायें तथा दाहिने तिरछे वेध में जो-जो मुद्दे लाइन में आते हैं वे सभी वेधीत होते हैं। परंतु सीधे वेध में मात्र सामने का नक्षत्र ही वेधीत होता है।
8. शुभ ग्रह के वेध का शुभ फल, अशुभ ग्रह के वेध का अशुभ फल इस तरह सर्वत्र विचार करना। परंतु किसी भी वस्तु के भावनात्मक विषय में यदि शुभ ग्रह का वेध हो तब वस्तु में वृद्धि, भाव में मंदी और क्रूर वेध से वस्तु में कमी तथा भाव में तेजी जानना।
9. गुरु, शुक्र हमेशा शुभ हैं, चंद्र क्षीण है। तब अशुभ इसके अलावा शुभ। बुध शुभ है फिर भी क्रूर ग्रह के साथ में हो तब उसे भी अशुभ समझना।

इन नौ नियमों को ध्यान में रखने से कोई भी व्यक्ति, पदार्थ, पशु, पक्षी अथवा देश के लिए सर्वतोभद्रचक्र आधार पर फलकथन करना अत्यंत सरल हो जाएगा।

●●●